RNI Reg. No. HARHIN/2015/63352

पशुधन ज्ञान

वर्ष : 5 अंक : 02 जुलाई, 2019 अर्धवार्षिक, हिसार For Free Circulation only

प्रकाशक
विस्तार शिक्षा निदेशालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125004 (हरियाणा)

प्रकाशकः

डॉ. जगतबीर फौगाट

निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार–125004 (हरियाणा)

सम्पादकः

डॉ. देवेन्द्र सिंह

सम्पादकीय मण्डलः

डॉ. वन्दना भनोट

डॉ. दिपिन चन्द्र यादव

डॉ. राजेश कुमार

प्रकाशकः डॉ. जगतबीर फौगाट, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने डॉ. देवेन्द्र सिंह के संपादन में **डोरेक्स ऑफसैट प्रिन्टर्स, हिसार** से लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के लिए मुद्रित करवा कर जुलाई, 2019 को प्रकाशित किया।

निर्देशः इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है तथा लेखकों द्वारा पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत की गई हैं। सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक तथा लेखकों के द्वारा दी गई जानकारी के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ब्राँडेड दवाइयों व उत्पादों के नाम केवल उदाहरण के रूप में दिए हैं तथा इन्हें विश्वविद्यालय की ओर से सिफारिश न माना जाए। पाठकों को यह सलाह दी जाती है कि किसी भी जानकारी को प्रयोग में लाते समय विशेषज्ञों की सलाह लें। किसी भी त्रुटि के लिए सम्पादक से सम्पर्क किया जा सकता है। सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

डॉ. गुरदयाल सिंह
कुलपति
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

हरियाणा कृषि प्रधान राज्य होने के साथ-साथ देश का अग्रणी पशुपालक राज्य भी है। कृषि एवं संलग्न क्षेत्रों में, पशुपालन क्षेत्र का आर्थिक विकास में योगदान सबसे ज्यादा है। आज के बदलते आर्थिक परिवेश में उच्च प्रोटीन युक्त आहार की मांग बढ़ रही है जिसे पूरा करने के लिए पशुपालन क्षेत्र पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। साथ ही साथ किसानों की आय दोगुनी करने में भी पशुपालन क्षेत्र की अहम भूमिका है। बढ़ती जनसंख्या के कारण कम होती कृषि क्षेत्र में पशुपालन को अत्याधिक प्रासंगिक बना दिया है।

हरियाणा राज्य देश के दुग्ध उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके साथ-साथ मांस उत्पादन, अंडा उत्पादन, मछली पालन व पशुपालन से जुड़े अन्य व्यवसायों में भी काफी वृद्धि हो रही है।

लुवास अपने वैज्ञानिक शोधों के द्वारा हमेशा से पशुओं की उत्पादक क्षमता बढ़ाने, उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने और बीमारियों से बचाव जैसे विषयों पर शोध करते हुए नवीन जानकारियों एवं तकनीकों को पशुपालकों तक पहुँचाने का कार्य कर रहा है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'पशुधन ज्ञान' वैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों एवं पशुपालकों को ज्ञान के माध्यम से जोड़ने का कार्य करती है। लुवास एवं अन्य क्षेत्रों में होने वाले पशुओं से संबंधित शोध कार्यों को विस्तार शिक्षा निदेशालय के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया जाता है। पशुधन ज्ञान पत्रिका के प्रकाशन के अवसर पर विस्तार शिक्षा निदेशक एवं पत्रिका के संपादक एवं वैज्ञानिकों को बधाई देता हूँ एवं आशा करता हूँ कि पत्रिका अपने उद्देश्य में सफल हो।

(गुरदयाल सिंह)

LALA LAJPAT RAI UNIVERSITY OF VETERINARY AND ANIMAL SCIENCES
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
HISAR 2010
"राष्ट्रोन्नयनं पशुवर्धनम्"

डॉ. जगतबीर फौगाट
निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

ग्रामीण क्षेत्रों में पशुपालन सामाजिक एवं आर्थिक बदलाव का महत्वपूर्ण अंग है। पशुपालन प्राचीन काल से ही हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। पशुधन हमें खाद्य उत्पादों के अलावा रोजगार तथा खेती के कार्यों के लिए ऊर्जा, खाद आदि उपलब्ध करवाते हैं। दुग्ध उत्पादन का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में गेहूं, धान और गन्ना जैसे प्रमुख पदार्थों से भी ज्यादा का हिस्सा है।

हरियाणा पूरे भारतवर्ष में दुग्ध उत्पादन में अग्रणी राज्यों में से एक है एवं प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता में पंजाब के बाद दूसरे स्थान पर है। राज्य में कुल दूध उत्पादन का लगभग 84 प्रतिशत हमें भैंसों एवं 15 प्रतिशत गायों से प्राप्त होता है। राज्य एवं देश की बढ़ती जनसंख्या, खाद्य सुरक्षा एवं संतुलित आहार के प्रति जागरूकता को ध्यान में रखते हुए पशुपालन क्षेत्र में रोजगार एवं वषद्धि की अपार संभावना है। ग्रामीण क्षेत्रों में युवाओं में डेयरी, मत्स्य पालन, सुअर पालन, मुर्गी पालन में बढ़ती रूचि एवं रोजगार के संभावनाओं को ध्यान में रखकर विस्तार शिक्षा निदेशालय पशुधन के विकास संबंधित नवीन जानकारियों एवं तकनीकों को पशुधन ज्ञान पत्रिका के माध्यम से पशुपालकों तक पहुंचाने का कार्य करते हैं। पशुधन में उच्चतर उत्पादों की प्राप्ति के लिए संतुलित आहार, नस्ल सुधार, बेहतर स्वास्थ्य तथा बिमारीयों का नवीनतम तकनीक द्वारा निदान और इलाज आदि ऐसे प्रांसगिक विषय हैं जिनकी जानकारी पशुपालकों तक समय–समय पर पहुंचाना अति आवश्यक है।

हरियाणा प्रदेश में पशुपालन के क्षेत्र में बहुत तरक्की की है जिसमें प्रदेश के पशु वैज्ञानिकों और पशुपालक किसानों का बहुत बड़ा योगदान है। अब विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका का वर्ष 2019 का द्वितीय अंक पशुधन व पशु उत्पाद के संबंधित सुचनाएं और ज्ञान पशुपालकों के घर–घर तक पहुंचाने का कार्य करेगा। मैं विश्वविद्यालय के सभी वैज्ञानिकों और अधिकारियों का धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ एवं पशुपालकों के लिए किए जाने वाले इस प्रयास की सराहना करता हूँ।

(जगतबीर फौगाट)

LALA LAJPAT RAI UNIVERSITY OF VETERINARY AND ANIMAL SCIENCES
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
HISAR 2010
"राष्ट्रोन्नयनं पशुवर्धनम्"

सम्पादक की कलम से...

पशुपालक भाइयों आज के समय में पशुपालन एक उद्यम का रूप ले चुका है। पशु उत्पादों जैसे दूध, दही, लस्सी आदि की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसे में पशुपालक एक उद्यमी की तरह सोच रखकर पशुपालन व्यवसाय से अधिकत्तम लाभ ले सकते हैं। बदलते परिवेश में पशुओं मे नए–नए प्रकार के रोग एवं समस्याएं हो रही हैं। ऐसे में हमें पशुपालन संबंधी नवीन जानकारी एवं तकनीकों के बारे में अवगत होते रहना चाहिए।

पशुपालकों को सरल एवं आसान भाषा में यह जानकारी पशुधन पत्रिका के माध्यम से दी जा रही है। हमारा उद्देश्य है कि पशुपालक पारंपरिक ज्ञान के साथ–साथ वैज्ञानिक विधि की भी जानकारी रखें एवं जरूरत पड़ने पर उसका उपयोग करें।

पशुधन ज्ञान की पत्रिका में पशुपालन में लाभदायक सिद्ध होने वाली हाइड्रोपोनिक्स, ड्रमसाइलेज जैसे आधुनिक जानकारियों से साथ–साथ मिलावटी दूध की पहचान, विभिन्न मौसमों में पशुओं की देखभाल, घातक बिमारीयों से बचाव, गर्भकाल में पशुओं की देखभाल आदि विषयों पर बहुत सी नवीन जानकारी दी गई है। पशुपालकों से निवेदन है कि इसमें बताई गई दवाइयों से संबंधित जानकारी का उपयोग करने से पहले पशु चिकित्सक की सलाह अवश्य लें।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पत्रिका पशुपालकों एवं अन्य बुद्धिजीवियों के लिए लाभप्रद सिद्ध होगी। मैं इस पुस्तिका के नवीन अंक के प्रकाशन पर कुलपति लुवास, विस्तार शिक्षा निदेशक, वैज्ञानिकगण एवं सम्पादक मंडल के सदस्यों का धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ।

(देवेन्द्र सिंह)

LALA LAJPAT RAI UNIVERSITY OF VETERINARY AND ANIMAL SCIENCES
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
HISAR 2010
"राष्ट्रोन्नयनं पशुवर्धनम्"

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठांक
1.	दुधारू पशुओं में दूध सुखाने हेतु व्यवहारिक पद्धतियां	राजेन्द्र यादव, अमित सांगवान एवं पंकज कुमार	1
2.	स्वच्छ दूध उत्पादन–पशुपालकों के जानने योग्य बातें	सीताराम गुप्ता, राजेन्द्र यादव एवं मनोहर लाल सैन	2
3.	पशुओं की जाँच हेतु नमूने भेजने सम्बंधित आवश्यक जानकारी	मनीश शर्मा, दिव्या अग्निहोत्री एवं गौरी चंद्रोत्रे	4
4.	पशुओं में टीकाकरण की महत्ता	सुनील राजोरिया, राजेश सिंगाठिया एवं विरेन्द्र सिंह	7
5.	पशुओं में मुंहपका–खुरपका रोग की रोकथाम कैसे करें	सन्दीप कुमार शर्मा एवं प्रज्ञा नाथिया	9
6.	अजोला की हरे चारे के लिए खेती	ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं अमित सांगवान	11
7.	घोड़ी में बांझपन व उसका प्रबंधन	मीनाक्षी विरमानी एवं राकेश कुमार मलिक	14
8.	पशुओं में जाड़ बढ़ने की समस्या	वैभव भारद्वाज, विनय यादव एवं गौरव कुमार	16
9.	बकरियों में होने वाली मुख्य बीमारियां	सुदीप सोलंकी एवं दुर्गा गुर्जर	17
10.	फील्ड में नकली दूध, सिंथेटिक दूध में यूरिया की जाँच	सज्जन सिंह एवं सुजोय खन्ना	20
11.	ऑक्सीटोसिन हार्मोन का दुधारू पशुओं में प्रभाव	रीतू रानी, सुरेन्द्र कुमार एवं संजय यादव	23
12.	पशु व्यवहार के अध्ययन द्वारा पशुधन प्रबंधन किस प्रकार आसान बनाया जा सकता है?	अरुण कुमार झीरवाल एवं गीतेश मिश्र	25
13.	पशु आहार ब्लॉकः पशुओं के लिए सम्पूर्ण आहार	सज्जन सिंह एवं दलजीत सिंह	27
14.	पशुओं में सम्पूर्ण विकास में सल्फर की भूमिका	सुमन चौधरी, संदीप कुमार एवं स्नेह गोयल	29
15.	सर्दियों में मछली पालन प्रबंध	विकास फूलिया, यशवंत सिंह एवं अंकुर जम्वाल	30
16.	भैंसों में प्रजनन सम्बंधित तकनीकियां	ऋषिपाल, पूजा यादव एवं रवि दत्त	33
17.	अंडों के संरक्षण के उपाय	सुरेंद्र कुमार, रीतू रानी एवं संजय यादव	36
18.	जलवायु परिवर्तन का पशुधन पर प्रभाव तथा उसको कम करने की रणनीतियाँ	संदीप, दीपक चोपड़ा एवं दिपिन चंद्र यादव	38
19.	कृषि एवं पशुधन उत्पादन के प्रभावी तरीके – आय वृद्धि के विकल्प	संदीप, दीपक चोपड़ा एवं दिपिन चंद्र यादव	39
20.	एन्टेरोटॉक्सीमिया (इ.टी.)– भेड़ व बकरियों में एक जानलेवा रोग	आनंद प्रकाश, पल्लवी मोदगिल एवं नरेश जिंदल	40
21.	प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता	सज्जन सिंह एवं दलजीत सिंह	41
22.	पशुओं को गर्भित कब करायें : गर्भाधान का उचित समय	ऋचा खीरबाट एवं रचना	42
23.	दूध–एक संपूर्ण आहार	सुरेन्द्र कुमार, रीतू रानी एवं संजय यादव	44
24.	दुधारू पशुओं हेतु पशुपालन विभाग, हरियाणा की विभिन्न योजनाएँ	गरिमा चौधरी, अमित सांगवान एवं देवेन्द्र सिंह	46
25.	पशुओं में जुगाली और लार का महत्व	ज्योत्सना मदान एवं शालिनी शर्मा	47

दुधारू पशुओं में दूध सुखाने हेतु व्यवहारिक पद्धतियां

राजेन्द्र यादव[1], अमित सांगवान[1] एवं पंकज कुमार[2]

[1]हरियाणा पशु विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़, [2]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, रोहतक
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

हमारे देश में विभिन्न नस्लों की गाय एवं भैंस मुख्य रूप से पशुपालकों द्वारा पाले जाने वाले पशु है। ऐसा माना जाता है कि एक स्वस्थ गाय या भैंस सामान्यतः अगर वर्ष में एक ब्यांत कर देती है तो ऐसे पशु को उच्च गुणवत्ता वाला पशु कहा जा सकता है, जो कि प्रजनन एवं उत्पादन दोनों की दृष्टि से पशुपालक के लिए फायदे का सौदा होता है। अतः यह बहुत जरूरी है कि पशु की प्रजनन क्षमता के साथ–साथ उसकी दूध उत्पादन की क्षमता भी अच्छी हो तथा साल–दर–साल उच्च बनी रहे। इसके लिए दुधारू पशु का अगली बार ब्याने से पहले पिछली ब्यांत का दूध उचित तरीके से सुखाना बहुत जरूरी होता है।

दुधारू पशुओं का दूध सुखाना क्यों महत्वपूर्ण हैः

दुग्धात्पादन चक्र में अगली ब्यांत में दूध उत्पादन को सकुशल रखने के लिए दूध सुखाई हुई गायों एवं भैंसों के थनों को एवं लेवटी को स्वस्थ रखना अति आवश्यक है। दूध सुखाने की अवधि के दौरान पशुओं के शरीर में, पौष्विक और चयापचयी क्रियाओं में एवं लेवटी तथा थनों में विशेश प्रकार के परिवर्तन होते हैं, जिनका असर अगली ब्यांत के दूध उत्पादन पर पड़ता है। गाय एवं भैंस प्रजातियों में दूध सुखाने की अवधि से अगली ब्यांत का दूध उत्पादन प्रभावित होता है इसलिए इन्हें सुखाने के लिए उपयुक्त समय एवं आवश्यक औषधि अपनानी चाहिए, जिससे की अगली ब्यांत में दूध का उत्पादन अधिक मात्रा में हो। गायों एवं भैंसों में दूध सुखाने की उपयुक्त अवधि अगली ब्यांत के ब्याने से 6 से 8 सप्ताह पहले होती हैं परन्तु इस अवधि में प्रोटीन एवं ऊर्जा समृद्ध आहार खिलाना भी आवश्यक होता है। आठ सप्ताह से अधिक समय तक सुखाई गाभिन पशुओं में स्थूलता अथवा मोटापा होने की संभावना रहती है तथा इससे अगली ब्यांत में दूध उत्पादन के घटने की भी संभावना रहती है।

गर्भाधान की तिथि पता नहीं रहने पर गाभिन पशुओं के दूध सुखाने की अवधि घट या बढ़ सकती है इसलिए सही समय पर दूध सुखाने एवं अगली ब्यांत में उचित दूध उत्पादन के लिए पशुओं का प्रजनन रिकार्ड रखना आवश्यक है।

दुधारू पशुओं का दूध सुखाने के लिए क्या करना चाहिएः

गाभिन पशुओं का प्रबंधन कार्यक्रम (संतुलित आहार, पशुशाला एवं पशु की स्वच्छता, शरीर और खुरों की सफाई, टीकाकरण इत्यादि) सभी प्रकार से सुव्यवस्थित होना आवश्यक है। इससे संक्रमण नियंत्रित होता है तथा पशुओं में चयापचयी रोग होने की संभावना भी कम रहती है। विसुखी दुधारू गाय एवं भैंसों में दीर्घकालिक प्रभावी एंटीबायोटिक को थनों के रास्ते चढ़ाने की क्रिया को गाय विसुखावन उपचार (ड्राई काऊ थैरेपी) कहते हैं। यह थन के संक्रमण को रोकने में सहायक सिद्ध होता है तथा दूध उत्पादन कायम रखके आर्थिक हानि से बचाता है।

विसुखावन उपचार अथवा ड्राई काऊ थैरेपी से पहले दुधारू पशुओं में दूध दुहने का कार्य क्रमशः अनियमित और आंशिक करके लगभग एक सप्ताह में समाप्त करना चाहिए। दुधारू पशुओं का दूध अचानक नहीं सुखाना चाहिए। इससे थनैला रोग होने की संभावना रहती है। थनों एवं लेवटी के संक्रमण को रोकने हेतु एंटीबायोटिक उपचार के बाद थनों के द्वार/छिद्र बंद करना बहुत ही लाभदायक होता है। दुधारू पशुओं के थनों अथवा लेवटी में अगर किसी प्रकार का कोई भी रोग है, तो उसका उपचार करवाने के बाद ही दूध सुखाने के लिए गाय विसुखावन उपचार पद्धति को अपनाना चाहिए, ताकि अगली ब्यांत तक पशु के थन एवं लेवटी सही सलामत रहें तथा अगली ब्यांत में पूरा दूध उत्पादन हो सके। पशुपालकों को चाहिए कि उपर्युक्त दिए गए सुझावों में किसी भी प्रकार की कोई शंका या समस्या हो तो अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक की सलाह अवश्य लेवें।

स्वच्छ दूध उत्पादन-पशुपालकों के जानने योग्य बातें

सीताराम गुप्ता, राजेन्द्र यादव एवं मनोहर लाल सैन

नैदानिक पशु चिकित्सा विज्ञान विभाग,
राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर।

विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार स्वच्छ दूध को ''स्वस्थ दुधारू पशुओं के थनों से निकले हुए दूध जिसको कि साफ–सुथरे बर्तनों में निकाला एवं इकट्ठा किया जाता है तथा जो कि धूल–मिट्टी, गंदगी, पशु के मल–मूत्र, मक्खियों, अपविष्ट पदार्थों, बाहरी पानी एवं दवाओं के अवशेषों से मुक्त होता है और इसमें जीवाणुओं की संख्या अपेक्षाकृत काफी कम होती है जो कि मनुष्य के लिए रोगजनक भी नहीं होते हैं'' के रूप में परिभाषित किया जाता है। दूध मानव जाति के लिए एक आदर्श एवं सम्पूर्ण खाद्य आहार है तथा प्राचीन समय से ही दूध एवं दूध से बने हुए अन्य पदार्थ मनुष्य के भोजन के अभिन्न अंग रहे हैं। दूध उत्पादन एवं खपत के मामले में भारत देश का पूरे विश्व में पहला स्थान है तथा पूरे विश्व का लगभग 16 प्रतिशत दूध भारत में उत्पादित होता है परन्तु हमारे देश में दूध उत्पादन का कारोबार ज्यादातर एकल किसान या फिर छोटी–छोटी इकाइयों के रूप में असंगठित क्षेत्र है। भारत में दूध उत्पादन 3.3 प्रतिशत जबकि दूध की खपत 5 प्रतिशत की वार्षिक दर से बढ़ रही है। अतः हमारे देश में असंगठित दूध उत्पादन का क्षेत्र, पशुपालकों में जानकारी का अभाव, दूध की खपत अथवा माँग का दूध उत्पादन की दर से ज्यादा बढ़ना, साफ–सफाई का अभाव एवं अंधाधुंध दवाइयों का पशुओं में इस्तेमाल करना इत्यादि मुख्य कारण हैं जो कि स्वच्छ दूध उत्पादन में बहुत बड़ी बाधाएँ हैं। स्वच्छ दूध उत्पादन की कमी दूध की गुणवत्ता को प्रभावित करती है तथा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से यह मनुष्य की सेहत के साथ भी एक खिलवाड़ है।

स्वच्छ दूध उत्पादन का महत्व एवं उद्देश्यः

- सम्पूर्ण रूप से पौष्टिक दूध का उत्पादन करना।
- धूल–मिट्टी, गंदगी, पशु के मल–मूत्र, बाहरी अपविष्ट पदार्थ, बाहरी पानी एवं दवाइयों के अवशेषों रहित दूध का उत्पादन करना।
- प्राकृतिक सुगंध एवं स्वाद वाला दूध उत्पादन करना।
- ज्यादा समय तक अच्छे रख रखाव वाले एवं खराब नहीं होने वाले दूध का उत्पादन करना।
- जीवाणु रहित या बहुत कम जीवाणुओं वाला तथा हानिकारक जीवाणुओं रहित दूध का उत्पादन करना।
- स्वच्छ दूध के साथ–साथ दूध से बने हुए पदार्थों की गुणवत्ता एवं रख–रखाव का समय बढ़ाना।
- मनुष्यों में दूध एवं दूध से बने हुए पदार्थों जनित रोगों की रोकथाम करना।
- स्वच्छ दूध उत्पादन के द्वारा दूध एवं दूध से बने हुए पदार्थों की मूल्य वृद्धि द्वारा पशुपालकों की आय में बढ़ोतरी करना।
- स्वच्छ दूध के तरीके अपनाकर पशुओं के साथ होने वाली क्रूरता की रोकथाम करना।
- वैज्ञानिक एवं अत्याधुनिक तरीके से पशुपालन करके स्वच्छ दूध उत्पादन को बढ़ावा देना।

अस्वच्छ दूध उत्पादन के कारण एवं स्त्रोतः

- दुधारू पशु का स्वयं का किसी भी प्रकार के रोग से ग्रस्त होना। पशुओं में होने वाला थनैला रोग स्वच्छ दूध उत्पादन में सबसे बड़ी बाधा है।
- दूध निकालते समय दूध की शुरूआती 2–3 धारें पशु के थनों के छिद्र पर पनपने वाले जीवाणुओं सहित हो सकती हैं तथा स्वच्छ दूध उत्पादन को प्रभावित करती है।
- पशु का दूध निकालने वाली जगह पर वातावरण में धुल–मिट्टी या अन्य किसी भी प्रकार की गंदगी का होना अस्वच्छ दूध उत्पादन को बढ़ावा देता है।
- दूध निकालने से पहले पशु की साफ–सफाई ना होना, खासकर पशु के शरीर के पिछले पैरों, पूंछ इत्यादि का साफ ना होना।
- दूध निकालते वक्त पशु द्वारा गोबर अथवा पेशाब कर

देना।

- दूध निकालते समय दूधशाला में उचित रोशनी का अभाव होना।
- दूध निकालने वाले व्यक्ति का खुद की साफ–सफाई कर ध्यान ना देना एवं बिना हाथ धोए तथा बिना साफ–सुथरे कपड़ों के दूध निकालना।
- दूध निकालने से पहले पशु की लेवटी एवं थनों को ढंग से साफ ना करना एवं ढंग से ना धोना।
- दूध निकालने वाली मशीन की साफ–सफाई का ध्यान नहीं रखना।
- जिन बर्तनों में दूध निकालते एवं इकट्ठा करके रखते हैं उनका स्वच्छ नहीं होना भी स्वच्छ दूध उत्पादन में एक महत्वपूर्ण बाधा है।
- दूध में जान–बूझकर अथवा अज्ञानतावश किसी भी तरह की मिलावट करना अस्वच्छ दूध उत्पादन को बढ़ावा देता है।

स्वच्छ दूध उत्पादन के उपायः

- स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए दूधारू पशु का पूर्ण रूप से स्वस्थ होना अत्यन्त आवश्यक है खासकर पशु को थनैला रोग से मुक्त होना चाहिए। अगर ऐसा नहीं है तो पशुपालक को चाहिए कि वो अपने पशुचिकित्सक से सम्पर्क करके अपने पशुओं का उचित उपचार करवाएँ।
- दूध निकालते समय थनों से निकलने वाली शुरूआती 2–3 धारें अलग से किसी बर्तन में निकाल लेनी चाहिए तथा पूरे दूध में नहीं मिलानी चाहिए।
- दूध निकालने की जगह का वातावरण पूर्ण रूप से धुल–मिट्टी एवं किसी भी प्रकार की गंदगी रहित होना चाहिए। अगर धूल उड़ रही हो तो थोड़ा पानी का छिड़काव कर देना चाहिए।
- दूध निकालने से पहले पशु के शरीर को खासकर कि पिछले पैरों, पूंछ, लेवटी एवं थनों को अच्छी तरह से पानी से धोकर साफ करना चाहिए।
- अगर मशीन से दूध निकालते हैं, तो दूध निकालने वाली मशीन की साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए एवं समय–समय पर मशीन को जीवाणु रहित करने के वैज्ञानिक तरीकों का भी इस्तेमाल करना चाहिए।
- दूध निकालते वक्त दूधशाला में रोशनी का उचित प्रबन्ध होना चाहिए ताकि गलती से भी दूध में किसी प्रकार का संक्रमण ना हो।
- दुग्धशाला में किसी भी प्रकार के बाह्य परजीवी जैसे कि मक्खी, चीचड़ी, मच्छर इत्यादि का प्रकोप नहीं हो।
- दूध निकालने वाले व्यक्ति को खुद की साफ–सफाई खासकर हाथों एवं कपड़ों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- दूध निकालने एवं इकट्ठा करने वाले बर्तनों को रोज अच्छी तरह से साफ करना चाहिए एवं समय–समय पर जीवाणुनाशक तरीकों को भी इस्तेमाल करना चाहिए।
- दूध में जानबूझकर या अन्य किसी भी कारण की वजह से किसी भी प्रकार की कोई भी मिलावट ना करें।
- किसी भी प्रकार की कोई शंका हो तो अपने नजदीकी पशु–चिकित्सक से मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिए।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

पशुओं की जाँच हेतु नमूने भेजने सम्बंधित आवश्यक जानकारी

मनीश शर्मा, दिव्या अग्निहोत्री एवं गौरी चंद्रोत्रे

लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

पशुओं में विभिन्न प्रकार के रोग ऐसे होते हैं जिनकी यदि समय पर जाँच करवायी जाए तो बहुत हद तक पशुओं को उन बीमारियों से बचाया जा सकता है। पशुओं में कब और कैसे जांच करायें, इस बात का ध्यान रखना बहुत जरूरी है ताकि पशु हमेशा स्वस्थ और उपयोगी बने रहें। पशुओं में जांच हमेशा जन्म के तुरंत बाद यानि नवजात अवस्था में, दूध उत्पादन में गिरावट की स्थिति में, प्रजनन अवस्था में, जानवर की चाल–ढाल सामान्य से हटकर हो और असामान्य व्यवहार की स्थिति में, भूख और प्यास न लगने की स्थिति में, असामान्य गोबर और मूत्र की स्थिति में करवायी जानी चाहिए।

जीवित पशुओं में जाँच हेतु एकत्रित किये जाने वाले विभिन्न नमूने (सैंपल)

1. **खूनः** खून के नमूने बीमारियों का पता लगाने के लिए अथवा प्रयोगशाला में कल्चर टेस्ट करने के लिए लाये जाते हैं, जो प्रायः जीवाणु, विषाणु अथवा प्रोटोजोआ से होने वाली बीमारियाँ होती है। इसके लिए पशुपालकों को खून का नमूना थक्का रोधी वाली शीशी में रख कर जाँच के लिए भेजना चाहिए। सीरम परीक्षण की जाँच करने के लिए नमूने बिना किसा थक्कारोधी वाली शीशी में लेना चाहिए ताकि खून जम जाए और सीरम से जाँच की जा सके।

खून लेने की विधि

पशुओं की जाँच हेतु खून का नमूना बहुत सावधानी से और साफ–सुथरी विधि से लेना चाहिए। बड़े पशु जैसे गाय, भैंस, घोड़ा इत्यादि का खून जुग्लर नाड़ी (गले की नस) अथवा पूंछ से लेना चाहिए। सूअर में वेना कावा से खून का नमूना लिया जाता है। शीशी में खून लेते ही उसे दोनों हाथों के बीच में रख कर धीरे–धीरे मिलाना चाहिए। जोर–जोर से मिलाने पर रक्त कोशिकाएं टूट जाती हैं जिसके कारणवश जाँच सही से नहीं हो पाती है।

खून के परजीवी एवं प्रोटोजोआ की जाँच हेतु खून को कांच की स्लाइड पर रख कर उसकी मोटी या पतली परत भी लगायी जा सकती है। इसे थिलेरिया, बबेसिया, अनाप्लास्मा, एवं ट्रिपैनोसोमा नामक बिमारियों की जाँच के लिए किया जाता है।

खून को यदि बिना थक्कारोधी के एकत्रित किया गया है, तो उस खून के नमूने को कुछ देर के लिए खून के जमने तक रखना चाहिए। तत्पश्चात् उपरी परत (सीरम) को 4^o सेल्सियस में रखना चाहिए उसके बाद उसे प्रयोगशाला में भेजा जा सकता है। ऐसा करने से खून अथवा सीरम का नमूना खराब नहीं होगा। यदि प्रयोगशाला दूर हो तो सेंपल ले जाते समय धूप से बचाव रखें, पुराने सेंपल का टेस्ट न करायें।

पेशाब

पशुपालक अपने बीमार पशु के पेशाब का नमूना स्वयं एकत्रित कर सकते हैं। इसके लिए केवल निम्न महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना चाहिए–

- सैंपल लेने की शीशी साफ होनी चाहिए।
- हाथों में दस्ताने पहनकर पेशाब का नमूना लें।
- जब पशु पेशाब कर रहा हो तब पेशाब के बीच की धार का नमूना लेना चाहिए।
- यदि सम्भव हो तो प्रातःकालीन पेशाब का नमूना लेना चाहिए।
- पेशाब के नमूने में कुछ ना मिलाएं और उसे तुरन्त 4^o सेल्सियस पर रख दें ताकि वह नमूना प्रयोगशाला पहुँचने तक खराब ना हो सके।

गोबर

कम से कम दस ग्राम गोबर या मल का नमूना परजीवी जाँच (पेट के परजीवी) के लिये शीशी में भर कर प्रयोगशाला में भेजना चाहिए। यदि प्रयोगशाला दूर है और नमूना भेजने में अधिक समय लगता है, तो जाँच का नमूना बर्फ में रखकर भेजना चाहिए। जाँच के लिए गोबर का नमूना सीधे पशु के पिछले हिस्से में हाथ डालकर भी निकला जा सकता है। अथवा स्वैब भी इस्तेमाल किया जा सकता है परन्तु स्वैब द्वारा परजीवी की जाँच मुश्किल हो

सकती है। स्वैब बाजार में उपलब्ध हैं जो छोटे पशु—पक्षी जैसे बकरी, भेड़, मुर्गी आदि में इस्तेमाल किया जा सकता है। जाँच के लिए गोबर को 4^o सेल्सियस में रखना चाहिए।

चरम रोग की जाँच हेतु नमूना

नमूने को 5 मि.ली. फॉस्फेट बुफ्फर्ड ग्लिसरीन में 2 ग्राम खाल/पपड़ी का नमूना, चमड़ी से आने वाला रेशा, मवाद, छालों का रेशा (सुई में भरकर) जाँच हेतु भेजना चाहिए। बाल तोड़कर अथवा भेड़ों में ऊन का नमूना, चिचड़, जूँ अथवा फफूंद रोगी की जाँच के लिए भेजना चाहिए। पक्षियों में पंख तोड़कर, विषाणु रोग की जाँच के लिए भेजना चाहिए।

गर्भाशय एवं लिंग के नमूने की जाँच

गर्भाशय एवं लिंग के नमूने की जाँच के लिए पशु के इंद्रियों से आने वाले पदार्थ को साफ सफाई का ध्यान रखते हुए स्वैब की मदद से जाँच के लिए भेजना चाहिए। कई बार नमूना भेजने के लिए उपयुक्त पदार्थ भी बाजार में उपलब्ध होता है जिसमें पशुपालक अपने पशुओं का नमूना जाँच हेतु भेज सकते हैं।

आँख की जाँच

आँख से आने वाले मैले पदार्थ एवं रेशे की आँख खोल कर स्वैब की मदद से जाँच के लिए लिया जा सकता है इसके अतिरिक्त काँच की स्लाइड के ऊपर भी आँख की जाँच के नमूने की परत बनाकर और सुखाकर उसे जाँच के लिए प्रयोगशाला में भेजा जा सकता है।

नाक से आने वाले पदार्थ की जाँच

रूई के स्वैब की मदद से नाक से आने वाले असामान्य पदार्थ को जाँच के लिए भेजा जा सकता है। स्वैब को ट्रांसपोर्ट मीडिया (एक विशेष प्रकार का मीडिया जो कि बाजार में उपलब्ध है) की सहायता से जाँच के नमूने भेजे जा सकते हैं।

दूध का नमूना

दूध का नमूना थनों को अच्छी तरह से स्प्रिट (70 प्रतिशत) में भीगी रूई के टुकड़े से साफ करके और सुखाकर उसके पश्चात् लेना चाहिए। दूध की पहली कुछ धार को छोड़कर अगली धार का नमूना भेजना चाहिए। शिरोलॉजिकल जाँच हेतु दूध का उबालना, जोर से मिलाना, बर्फ मे जमा कर ठंडा आदि नहीं करना चाहिए। दूध को 4^o सेल्सियस में रखकर तुरंत जाँच हेतु भेजना चाहिए।

जाँच के लिए नमूनों को जमा करने के विशय में जानकारी हेतु सामान्य फार्म

पशुपालक का विवरण

नाम	
पता	
टेलिफोन/फैक्स/मोबाइल नं./दूरभाष	
नमूना एकत्रित करने की तिथि	
नमूना एकत्रित करने का समय	
नमूना एकत्रित करने की जगह	

पशु संबंधित जानकारी

पशु की निशानी (पशु का विवरण) नस्ल/जाति/उमर/लिंग/रंग/निशान/चिह्न/वजन इत्यादि	
समूह में रहने वाले पशुओं की संख्या एवं उम्र	
पशु का रख रखाव, आवास, खानपान आदि की व्यवस्था	
टीकाकरण का विवरण	
पशु के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी	
महामारी फैलने की जगह का विवरण	
गत वर्षों में महामारी का कोई विवरण	
क्या पशुचिकित्सक द्वारा रोगी पशुओं की जाँच हुई?	
पशुचिकित्सक का नाम एवं पता	
क्या कोई प्रयोगशाला द्वारा जाँच हुई बिमारी/बीमार पशुओं से संबंधित अन्य जानकारी	

नमूने के प्रकार

नमूने के प्रकार	खून, सीरम, पेशाब, दूध, गोबर, चमड़ी का रेशा, पशु के बाल, भेड़ की ऊन, मुर्गी के पंख इत्यादि
नमूने की जाँच के लिए नमूना किस्में भेजें	नमूने की जाँच के लिए कल्चर मीडिया नमूने की जाँच के लिए रसायन ठंडी व्यवस्था बरकरार रखते हुए (कोल्ड चैन)
नमूना संग्रह / प्राप्त करने वाले अधिकारी का नाम	हस्ताक्षर नाम पता तिथि / स्थान संपर्क हेतु टेलिफोन / दूरभाष / फैक्स / मोबाइल नं.

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	पशु विज्ञान केन्द्र
1.	पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करना, बाई पास चौक, कैथल
2.	पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत
3.	पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद
4.	पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा
5.	पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी
6.	पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक
7.	विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार
8.	पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला
9.	पशु विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
10.	पशु विज्ञान केन्द्र, करनाल
11.	पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी
12.	पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव

पशुओं में टीकाकरण की महत्ता

सुनील राजोरिया, राजेश सिंगाठिया एवं विरेन्द्र सिंह

पशुचिकित्सा विश्वविद्यालय प्रशिक्षण एवं अनुसंधान केन्द्र, डूंगरपुर

राजस्थान पशुचिकित्सा एंव पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर।

संक्रामक और असंक्रामक रोग पशुधन के स्वास्थय एवं उत्पादकता को मुख्य रूप से प्रभावित करने वाले कारक है। ये रोग विभिन्न प्रकार के जीवाणु, विषाणु, कवक या परजीवियों से उत्पन्न एवं प्रसारित होते हैं। संक्रामक रोग बहुत ही घातक होते है जिन से एक ही समय में बहुत बड़ा पशुधन घनत्व प्रभावित हो सकता है। संक्रामक रोगों से पशुपालकों को अत्याधिक नुकसान उठाना पड़ता है क्योंकि इनके कारण कई बार पशु की दो–तीन दिन में ही मृत्यु हो जाती है। असंक्रामक रोग एक पशु से दूसरे पशु में संचारित नहीं होते। खुरपका–मुहँपका, गलघोटू, ब्रूसीलोसिस, ब्लैक क्वार्टर और एंथ्रेक्स पशुओं में होने वाले कुछ प्रमुख संक्रामक रोग है। इन संक्रामक रोगों मे से कुछ बीमारियों से बचाव हेतु टीके उपलब्ध हैं। उचित समय पर पशुओं का टीकाकरण करा देने से कई रोगों से पशुओं को बचाया जा सकता है।

खुरपका–मुँहपका रोग

यह एक विषाणु जनित रोग है, जिसमें पशुओं मे तेज बुखार आने के साथ ही मुँह और पैरों पर छाले बन जाते है। इस रोग से बचाव हेतु वर्ष में 2 बार (जनवरी–फरवरी एवं अगस्त–सितम्बर) टीकाकरण किया जाता है।

गलघोंटू रोग

गाय, भैंस, बकरी और भेड़ को प्रभावित करने वाला अत्यंत घातक जीवाणु जनित रोग है। तेज बुखार, मुँख से लार सांस लेने मे तकलीफ, गले से गर्र–गर्र की आवाज आना और अचानक से मृत्यु इसके प्रमुख लक्षण है। इस रोग से बचाव हेतु वर्ष में 1 बार (मई–जून) टीकाकरण किया जाता है।

लंगड़ा बुखार

यह भी एक जीवाणु जनित रोग है, जिसका प्रसारण मिट्टी मे मौजूद स्पोर तथा संक्रमित चारे और पानी से होता है। इसमे पशुओं में तेज बुखार के साथ लगड़ापन आ जाता है। समय पर उपचार नहीं मिलने पर रोगी पशु की मृत्यु हो सकती है। इस रोग से बचाव हेतु भी गलघोंटू रोग की भांति ही वर्श में 1 बार (मई–जून) टीकाकरण किया जाता है।

ब्रुसेला रोग

पशुओं को संक्रमित करने वाला यह जीवाणु जनित रोग है जिससे ग्रसित होने पर पशुओं मे गर्भ के अंतिम तिमाही मे गर्भपात हो जाता है। इस रोग से बचाव हेतु "राष्ट्रीय ब्रुसेला रोग नियंत्रण कार्यक्रम" के अंतर्गत ब्रुसेला संभावित पशु झुण्ड में 5 से 8 माह की आयु के मादा पशुओं में" ब्रुसेला स्ट्रेन–19" द्वारा टीकाकरण किया जाता है।

टीकाकरण करते समय ध्यान देने योग्य बातें–

- केवल स्वस्थ पशुओं का टीकाकरण करें।
- निर्धारित ठंड श्रृंखला में टीके को बनाए रखा जाना चाहिए।
- टीका निर्माताओं के लिखे गए निर्देशों और खुराक का कड़ाई से पालन करें।
- टीकाकरण के 2–3 सप्ताह पूर्व पशुओं को कृमिनाशक दवा पिलानी चाहिए, यह पशुओं मे बेहतर प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया के लिए आवश्यक है।
- संभावित रोग प्रकोप के एक माह पूर्व टीकाकरण किया जाना चाहिए।
- जहां तक हो सके उन्नत गर्भावस्था में टीकाकरण नहीं करना चाहिए।

टीकाकरण विफलता के आम कारण

- कमजोर और बीमार पशुओं का टीकाकरण।
- रख–रखाव और कोल्ड चेन में कमी।
- झुण्ड के सभी पशुओं में टीका न लग पाना।
- बार–बार एक ही शीशी को ठंड से बाहर निकालकर इस्तेमाल करना।
- टीके के स्ट्रेन और रोग जनक जीवाणु के स्ट्रेन के भिन्न प्रकार या उप प्रकार होने से।

बचाव ही उपचार

- यदि कोई पशु बीमार दिखाई देता है तो उसे अन्य पशुओं से अलग कर दें।
- बीमार पशु के संपर्क मे आए दाने, चारे और पानी को नष्ट कर देना चाहिए।
- पशु आवास की फर्श और दीवारों की सफाई करनी चाहिए।
- पशु आवास की चूने और फॉरमलिन का घोल बनाकर पुताई करनी चाहिए।
- पशुओं को पौष्टिक आहार तथा मिनरल मिक्सर की खुराक देनी चाहिए।
- नए खरीदे पशुओं को तुरंत समूह में शामिल नहीं करना चाहिए।
- अधिक दूरी तक पशुओं का परिवहन नहीं करना चाहिए।
- समय–समय पर पशुओं को कीड़े की दवा देनी चाहिए।
- बाह्य परजीवियों से पशुओं का बचाव आवश्यक है।
- समस्या आते ही पशु चिकित्सक से तुरंत संपर्क करना चाहिए।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं. पशु विज्ञान केन्द्र

1. पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल, बाई पास चौक, कैथल
2. पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत
3. पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद
4. पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा
5. पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी
6. पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक
7. विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार
8. पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला
9. पशु विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
10. पशु विज्ञान केन्द्र, करनाल
11. पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी
12. पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव

पशुओं में मुंहपका-खुरपका रोग की रोकथाम कैसे करें

सन्दीप कुमार शर्मा एंव प्रज्ञा नथिया

स्नातकोतर पशु चिकित्सा शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान, जयपुर
राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

मुंहपका–खुरपका रोग विभक्त–खुर वाले पशुओं का अत्यन्त संक्रामक एवं घातक विषाणुजनित रोग है। यह गाय, भैंस, भेंड़, बकरी, सूअर आदि पालतू पशुओं एवं हिरन आदि जंगली पशुओं को होता है। इस रोग से प्रभावित जानवरों को तेज बुखार के साथ ही मुंह के भीतर और खुर में छाले पड़ जाते हैं। इसका संक्रमण होने के कारण गायों का गर्भपात हो सकता है और समय पर इलाज नहीं होने के कारण युवा बछड़े मर भी सकते हैं। रोग के असर के कारण कुछ जानवर स्थायी रूप से लंगड़े भी हो सकते हैं, जिस कारण वे खेती में इस्तेमाल के लायक नहीं रह जाते। इस रोग से संक्रमित मवेशियों के दूध की मात्रा भी कम हो जाती है। हालांकि ऐसे मवेशियों का दूध अनुपयोगी हो जाता है। अतः इस रोग के कारण कृषक को बहुत धन की हानि होती है और कार्य भी बाधित हो जाते हैं।

रोग का कारण

यह रोग पशुओं को, एक बहुत ही छोटे आँख से न दिख पाने वाले विषाणु या वायरस द्वारा होता है। जिसे मुंहपका–खुरपका विषाणु कहते हैं। इस विषाणु के अनेक प्रकार तथा उप–प्रकार है, इनकी प्रमुख किस्मों में ओ.ए.सी. एशिया–1, एशिया–2, एशिया–3, सैट–1, सैट–3 तथा इनकी 14 उप–किस्में शामिल है। हमारे देश मे यह रोग मुख्यतः ओ.ए.सी. तथा एशिया–1 प्रकार के विषाणुओं द्वारा होता है। नम–वातावरण, पशु की आन्तरिक कमजोरी, पशुओं तथा लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर आवागमन तथा नजदीकी क्षेत्र में रोग का प्रकोप इस बीमारी को फैलाने में सहायक कारक हैं। मुंहपका–खुरपका रोग किसी भी उम्र की गायें एवं उनके बच्चों में हो सकता है। इसके लिए कोई भी मौसम निश्चित नहीं है अर्थात् यह रोग किसी भी समय हो सकता है। हालांकि गाय में इस रोग से मौत तो समान्यता नहीं होती फिर भी दुधारू पशु सूख जाते हैं। इस रोग का क्योंकि कोई इलाज नहीं है इसलिए रोग होने से पहले ही उसके टीके लगवा लेना फायदेमन्द है।

रोग का संक्रमण

यह रोग बीमार पशु के सीधे सम्पर्क में आने, पानी, घास, दाना, बर्तन, दूध निकलने वाले व्यक्ति के हाथों से, हवा से तथा लोगों के आवागमन से फैलता है। रोग के विषाणु बिमार पशु की लार, मुंह, खुर व थनों में पड़े फफोलों में बहुत अधिक संख्या में पाए जाते हैं। ये खुले में घास, चारा, तथा फर्श पर कई महीनों तक जीवित रह सकते हैं लेकिन गर्मी के मौसम में यह बहुत जल्दी नष्ट हो जाते हैं। विषाणु जीभ, मुंह, आंत, खुरों के बीच की जगह, थनों तथा घाव आदि के द्वारा स्वस्थ पशु के रक्त में पहुंचते हैं तथा लगभग 4–5 दिनों के अंदर उसमें बीमारी के लक्षण पैदा करते हैं।

रोग के लक्षण

इस रोग के होने पर पशु को तेज बुखार हो जाता है। बीमार पशु के मुंह, मसूड़े, जीभ के ऊपर एंव नीचे वाले होंठ के अन्दर का भाग एंव खुरों के बीच की जगह पर छोटे–छोटे दाने से उभर आते हैं फिर धीरे–धीरे ये दाने आपस में मिलकर बड़ा छाला बनाते हैं। समय पाकर यह छाले फूट जाते हैं और उनमें जख्म हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में पशु जुगाली करना बंद कर देता है। मुंह से लगातार लार गिरती रहती है। पशु सुस्त पड़ जाते और कुछ खाते–पीते नहीं है। खुर में जख्म होने की वजह से पशु लंगड़ाकर चलता है। हालांकि व्यस्क पशु में मृत्यु दर कम (लगभग 10 प्रतिशत) है पर दुधारू पशुओं में दूध का उत्पादन एकदम गिर जाता है। वे कमजोर होने लगते हैं।

प्रभावित होने वाले पशु का बार–बार पैर को झाड़ना (पटकना), पैरों में सूजन (खुर के आस–पास), लंगड़ाना, खुर में घाव होना एवं घावों में कीड़ा हो जाना, जीभ, मसूड़े, ओष्ट आदि पर छाले पड़ जाना, जो बाद में फूटकर मिल जाते हैं, उत्पादन क्षमता में अत्यधिक ह्रास, कार्य क्षमता में

कमी, प्रभावित पशु स्वस्थ्य होने के उपरान्त भी महीनों तक और कई बार जीवनपर्यन्त हांफते रहता है, शरीर के रोयें (बाल) तथा खुर बहुत बढ़ जाते हैं, गर्भवती पशुओं में गर्भपात की संभावना बनी रहती है।

रोग का उपचार

इस रोग का कोई निश्चित उपचार नहीं है अतः रोगी पशु में सेकेन्डरी संक्रमण को रोकने के लिए उसे पशु चिकित्सक की सलाह पर एंटीबायोटिक के टीके लगाए जाते हैं अथवा रोगग्रस्त पशु के पैर को नीम एवं पीपल के छाल का काढ़ा बना कर दिन में दो से तीन बार धोना चाहिए। प्रभावित पैरों को फिनाइल–युक्त पानी से दिन में दो–तीन बार धोकर मक्खी को दूर रखने वाली मलहम का प्रयोग करना चाहिए। मुँह के छाले को 1 प्रतिशत फिटकरी के पानी में घोलकर दिन में तीन बार धोना चाहिए। इस दौरान पशुओं को मुलायम एवं सुपाच्य भोजन दिया जाना चाहिए। पशु चिकित्सक के परामर्श पर दवा देनी चाहिए।

रोग से बचाव

- टीकाकरण ही इस बीमारी से बचाव के लिए सर्वोतम है इसलिए पशुओं को पोलीवेलेंट वेक्सीन के वर्ष में दो बार टीके अवश्य लगवाने चाहिए। बच्छे/बच्छियां में पहला टीका 1 माह की आयु में, दूसरा तीसरे माह की आयु तथा तीसरा 6 माह की उम्र में और उसके बाद नियमित छः माह के अन्तराल पर लगवाते रहना चाहिए।
- बीमारी हो जाने पर रोग ग्रस्त पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिए।
- बीमार पशुओं की देखभाल करने वाले व्यक्ति को भी स्वस्थ पशुओं के बाड़े से दूर रहना चाहिए।
- बीमार पशुओं के आवागमन पर रोक लगा देना चाहिए।
- रोग से प्रभावित क्षेत्र से पशु नहीं खरीदना चाहिए।
- पशुशाला को साफ–सुथरा रखना चाहिए।
- इस बीमारी से मरे पशु के शव को खुला न छोड़कर जमीन में गहरे गड्डे मे गाढ़ना चाहिए।
- समय–समय पर पशु चिकित्सक का परामर्श लेते रहना चाहिए।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)
3. निःशुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री
(पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

अज़ोला की हरे चारे के लिए खेती

ज्योति शुन्थवाल, देवेन्द्र सिंह एवं अमित सांगवान

हरियाणा पशु विज्ञान केन्द्र, महेंद्रगढ़

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

भारतवर्ष में बढ़ती जनसंख्या के कारण कृषि योग्य भूमि दिन प्रतिदिन घटती जा रही है, साथ ही बदलते पर्यावरण के कारण खेती करना मुश्किल हो गया है। देश में बढ़ती मवेशियों की जनसंख्या, इंसानों की खाद्य प्रणाली पर बोझ डाल रही है, जिससे पशुपालन और हरे चारे हेतु भूमि की उपलब्धता कम होती जा रही है। इसलिए भारत में जरूरी है कि पशुपालन में ऐसे खाद्य पदार्थ इस्तेमाल किये जाए जो मनुष्य के खाद्य पदार्थो से भिन्न हो और कम से कम संसाधन इस्तेमाल करें। कृषि से होने वाली आय में हर साल कमी आती जा रही है साथ ही इससे जुड़े पर्यावरण व नुकसान का खतरा भी बना रहता है। ऐसे संकट ग्रस्त किसानों के लिए पशुपालन एक फायदे का विकल्प हो सकता है। परन्तु पशुपालन में भी परम्परागत तरीके से पशुपालन में हरे चारे की आपूर्ति करना असंभव हो गया है। जहां इंसानों के लिए कृषि करने योग्य भूमि नहीं है वहाँ पशुपालन के लिए हरे चारे का प्रबंध करना बहुत मुश्किल हो गया है। ऐसे में जरूरी है कि पशुपालन में इस्तेमाल आने वाले पारंपरिक हरे चारे की बजाय नए अपरम्परागत खाद्य पदार्थ का इस्तेमाल हो ताकि पशुपालन के कारण मनुष्य की खाद्य प्रणाली पर बोझ ना आये और पशुपालन करना भी आसान और फायदेमंद रहे। इसी पद्धति को ध्यान में रखते हुए अज़ोला की खेती करना पशुपालक के लिए बहुत ही फायदेमंद व आसान तरीका होगा जिससे पशुपालन में लाभ की बढ़ोतरी हो सकती है।

क्या हैं अज़ोला?

अज़ोला एक नमी वाले जलवायु में पाए जाना वाला जलीय फर्न होता है। ये पानी की सतह पर तैरती रहती है। धान की खेती में भी अज़ोला को प्राकृतिक हरी खाद के रूप में उगाया जाता है। अज़ोला के साथ सहजैविक के रूप में नीली हरित काई पायी जाती है। अज़ोला बहुत ही पौष्टिक आहार होता है जिसे पशुओं को हरे चारे के स्वरूप में खिलाया जा सकता है। जहाँ हमारे भारतवर्ष में सालभर हरा चारा पशुओं को उपलब्ध नहीं हो पा रहा, अज़ोला खेती से पशुपालक सस्ता और पौष्टिक आहार दे सकते हैं। अतः पशुओं को होने वाले हरे चारे की कमी से होने वाले व्याधियों को भी दूर किया जा सकता है।

कैसे करें अज़ोला की खेती?

अज़ोला की खेती बहुत ही आसानी से की जा सकती है, जिसमें पशुपालक को छोटी–छोटी बातों का ध्यान रखना है। इसके लिए कोई अलग से विशेषज्ञता की जरूरत नहीं होती। अज़ोला की खेती अगर हरे चारे के रूप में किया जाए तो चारे का प्लाट 2 मीटर लम्बाई, 1 मीटर चौड़ाई, 20 सेंटीमीटर गहरे गड्डे में बनाया जा सकता है। अज़ोला की क्यारी में एक पॉलीथीन शीट बिछा दी जाती है। ध्यान रखे की उसमें 10 सेमी (आधा) पानी का स्तर बना रहे। क्यारी की चौड़ाई 1.5 मीटर तक रख सकते हैं। चारे की आवश्यकता के आधार पर क्यारी की लंबाई अलग–अलग रखी जा सकती है। लगभग 8 वर्ग मीटर क्षेत्र की दो क्यारी जिनकी लंबाई 2.5 मीटर हो, से दो गाय के लिए हरे चारे की 50 प्रतिशत जरूरत पूरी हो सकती हैं।

उदाहरण स्वरूप 2.5 मीटर, 1.5 मीटर की क्यारी तैयार करने के बाद, क्यारी में 15 किलो छानी हुई मिट्टी फैला दी जाती है, जो अजोला को पोषक तत्व प्रदान करेगी। लगभग 5 किलो गाय के गोबर (सड़ने के पूर्व के 2 दिन का) को पानी में मिला दिया जाता है जिससे अजोला को कार्बन प्राप्त होगा। 10 किलो रॉक फास्फेट, 1.5 किलो मैग्निशियम और 500 ग्राम पोटाश की म्यूरेट के मिश्रण से बना लगभग 40 ग्राम पोषक तत्व मिश्रण अजोला की क्यारी

में डाला जाता है। इस मिश्रण में वंछित मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व भी डाले जाते है। इससे न केवल अजोला की सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी होगी बल्कि इसे खाने पर पशुओं की सूक्ष्म पोषक तत्वों की जरूरत भी पूरी हो सकेगी। क्यारी में 10 सें.मी के जल स्तर को बनाए रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी डाला जाता है। अगर प्रगतिशील पशुपालक बड़े स्तर पर वैज्ञानिक और सतत् आधार पर लंबे समय के लिए अजोला का उत्पादन करना चाहता है तो इसके लिए 2 मीटर लंबे, एक मीटर चौड़े और 0.5 मीटर गहरे सीमेंट कंक्रीट के टैंक की आवश्यकता होती है। 25 वर्ग मीटर क्षेत्र में दस या अधिक टैंकों का निर्माण किया जा सकता है। प्रत्येक टैंक के लिए पानी की व्यवस्था करने के लिए ऊपर रखी हुई टंकी से पाइप और नल लगाया जाना चाहिए। टैंक में समान रूप से मिट्टी डाल देनी चाहिए। मिट्टी की परत 10 सें.मी. गहरी होनी चाहिए। टैंक में गाय का गोबर 1 से 1.5 किलो प्रति वर्ग मीटर की दर से (प्रति टैंक 2 से 3 किलो गाय का गोबर) डालना चाहिए। टैंक में हर हफ्ते प्रति वर्ग मीटर 5 ग्राम की दर से सिंगल सुपर फास्फेट (एसएसपी) डालना चाहिए (प्रति टैंक 10 ग्राम एसएसपी)। टैंक में मिट्टी से 10 से 15 से.मी. की ऊँचाई तक पानी डालना चाहिए। मिट्टी को अच्छे से जमा देना चाहिए। कीट संक्रमण से बचाव के लिए 2 ग्राम कार्बोफुरन मिला कर ताजा अजोला इनोकूलम तैयार करें। पानी की सतह पर निर्मित फोम और स्कम की परत को हटा दें। अगले दिन, पानी की सतह पर लगभग 200 ग्राम ताजा अजोला इनोकूलम छिड़क दें। पानी की सतह पर अजोला की परत बनने में 2 सप्ताह का समय लगता है। टैंक में पानी का स्तर, विशेषकर गर्मियों के दौरान बनाए रखा जाना चाहिए। ज्यादा प्रकाश को रोकने के लिए टैंक पर नारियल के पत्तों की शेड/छप्पर बना देना चाहिए। इससे सर्दियों के दौरान अजोला पर ओस भी नहीं जमती है।

अज़ोला 7 दिनों के अन्दर पूरी क्यारी में फैल जायेगा और एक मोटी परत का रूप ले लेगा। आदर्श रूप में यह सात दिनों के भीतर 10 किलो अज़ोला का उत्पादन कर देता है। सात दिन बाद, हर दिन 1.5 किलो अजोला प्रयोग करने के लिए निकाल सकते है। छलनी से अजोला प्लास्टिक की ट्रे में एकत्र किया जाना चाहिए। इस अजोला को मवेशियों को खिलाने से पूर्व ताजा पानी में धोना चाहिए। अजोला की धुलाई में प्रयुक्त पानी को पेड़–पौधों के लिए जैविक खाद के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। अजोला और पशु आहार को 1:1 अनुपात में मिलाकर पशुओं को खिलाया जाता है।

अजोला से हटाए गए गाय के गोबर और खनिज मिश्रण की पूर्ति के लिए अजोला क्यारी में कम से कम सात दिनों में एक बार गाय का गोबर और खनिज मिश्रण डालना चाहिए। हर 60 दिनों के बाद, अजोला क्यारी से पुरानी मिट्टी हटा दी जाती है और 15 किलो नई उपजाऊ मिट्टी डाली जाती है ताकि क्यारी में नाइट्रोजन निर्माण से बचा जा सके और अजोला को पोषक तत्व उपलब्ध होते रहे। मिट्टी और पानी निकालने के बाद, कम से कम छह महीने में एक बार पूरी प्रक्रिया को नए सिरे से दोहराते हुए अजोला की खेती की जानी चाहिए।

अज़ोला के लाभ :

1. यह एक असानी से उगने वाला हरा चारा है।
2. यह हरे चारे के रूप में हर मौसम में उगाया जा सकता है। इसे नियंत्रित वातावरण में रबी और खरीफ दोनों मौसम में उगाया जा सकता है।
3. यह हरे चारे के रूप में बहुत ही पौष्टिक होता है। इसमें प्रोटीन (35–37 प्रतिशत), खनिज जैसे कैल्शियम (67 मिलीग्राम/100 ग्राम), विटामिन आदि की मात्रा होती है जो पशु उत्पादन में बहुत ही जरूरी है।
4. ये पशु को सूखे के मौसम में खिलाया जा सकता है

ताकि पूरा साल पशु के लिए हरा चारा उपलब्ध हो सके और दूध की पैदावार में कमी ना आये।

5. इसको उगाने में अलग से मजदूर की आवश्यकता नहीं होती। साथ ही इसमें कोई भी अलग से तकनीकी ज्ञान होने की आवश्यकता नहीं होती। अतः पशुपालक इसे आसानी से अपने फार्म पर उगा सकता है।
6. अज़ोला खिलाने से पशुओं में बांझपन की समस्या दूर हो जाती है।
7. पशुओं के पेशाब में खून की समस्या फॉस्फोरस की कमी से होती है। पशुओं को अजोला खिलाने से यह कमी दूर हो जाती है।
8. अजोला से पशुओं में कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहे की आवश्यकता की पूर्ति होती है जिससे पशुओं का शारीरिक विकास अच्छा होता है।

अज़ोला को उगाने में सावधानियां :

1. अज़ोला उगाने वाला वातावरण संक्रमण मुक्त होना चाहिए ताकि अच्छी पैदावार हो सके।
2. अज़ोला के प्लांट में नियमित रूप से मिट्टी, गोबर व उर्वरक डालने चाहिए व अज़ोला नियमित रूप से काट लेनी चाहिए ताकि इसकी पैदावार बनी रहे।
3. अज़ोला की उपज के लिए सही तापमान का होना बहुत जरूरी है, लगभग 35 डिग्री सेल्सियस का तापमान आवश्यक हैं। अज़ोला की खेती को ज्यादा धूप व ज्यादा ठण्ड से बचाने के लिए क्यारी को ऊपर से पॉलिथीन शीट से ढक देना चाहिए।
4. अज़ोला के उगने वाले माध्यम का पीएच 5.5 से 7 के बीच का होना चाहिए।
5. अजोला एक आसान तकनीक है जिसमें पशुपालक न्यूनतम प्रयास व संसाधनों से अच्छा हरा चारा पूरे वर्ष भर ले सकता है। अतः पशुपालक इसके इस्तेमाल को भली–भांति समझ कर, इसका उपयोग करें और वैज्ञानिक विधियों द्वारा पशुपालन में अपने आमदनी बढाएं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु– 930–000–0857 (पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

घोड़ी में बांझपन व उसका प्रबंधन

मीनाक्षी विरमानी एवं राकेश कुमार मलिक

पशु चिकित्सा शरीर क्रिया विज्ञान एवं जैव रसायन विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

घोड़ी एक मौसमी पॉली इस्ट्रस ब्रीडर है, यानि उसके प्रजनन तंत्र साल के एक विशेष सत्र के दौरान कई चक्र के लिए सक्रिय होते हैं। पर्यावरण और अन्य कारक विशेष रूप से सर्दियों के यौन निष्क्रियता और बंसत ऋतु में चक्रीय गतिविधि की शुरूआत के बीच संक्रमणकालीन अवधि के दौरान प्रजनन कार्य पर गहरा असर डालती है। प्रजनन के मौसम के दौरान जो घोड़ी गर्भवती नहीं है, उसमें आवर्ती मद या गर्मी के चक्र बार–बार होते हैं।

बांझपन और उप–प्रजनन के कारण

आमतौर पर प्रजनन दर 40 दिनों के गर्म पर एक बार गर्मी में आई घोड़ी में 50 प्रतिशत और प्रजनन मौसम में 80–85 प्रतिशत होना चाहिए। इसमें से 70–75 प्रतिशत घोड़ियों को गर्भ की अवधि के अंत में सामान्य बछड़े को जन्म देना चाहिए। सफल प्राकृतिक गर्भाधान या तो प्राकृतिक या कृत्रिम गर्भाधान के बाद एक नवजात शिशु को जन्म देने की विफलता को बांझपन कहा जाता है। बांझपन या उप प्रजनन के लिए कई कारक होते हैं जो अकेले या संयोजन में कार्य करते हैं। मोटे तौर पर वे बांझपन के संक्रामक या गैर संक्रामक कारणों के रूप में वर्गीकृत किये जा सकते हैं।

1. **ऋतु चक्र में न आना** : आमतौर पर एक गर्भवती घोड़ी गैर चक्रीय होती है। हांलाकि गैर चक्रीयता के कारण लगातार सीएल या जल्दी भ्रूण मौत, जननांगों में अपजनन, कुछ ट्यूमर, व्यवहारिक यौन निष्क्रियता वार्धक्य करने के लिए लंबे समय तक डाई–इस्ट्रस में रहने से हो सकते हैं।
2. **गर्भ धारण करने में विफलताः** घोड़ी में इस असमर्थता के कारण गर्भाशय में फाइब्रोसिस, डिंबवाहिनी में रूकावट, संक्रमण, जीवाणु, कवक, माइकोप्लाज्मल या वायरल, संरचनात्मक दोष, धँसा गुदा, मूत्र का इकट्ठा होना, न्यूमोवैजाइनल, बच्चेदानी में रसौली, डिम्बवाहिनी नली में रूकावट, खराब गुणवत्ता के अंडक हो सकते हैं।
3. **भ्रूणीय हानि** : नुकसान घोड़ी गर्भवती होती है लेकिन 40 से 50 दिनों से परे गर्भावस्था बनाए रखने में असमर्थ हो जाती है। यह प्रोजेस्ट्रान की कमी, हल्की सूजन, भ्रूण दोष, तनाव, कुपोषण, मौसमी और जलवायु परिस्थितियों, घोड़ी की उम्र या प्रणालीगत बीमारी की वजह से हो सकता है।

समस्याग्रस्त घोड़ी का प्रजनन

समस्याग्रस्त प्रजनन घोड़ी वह है जो दोहराने प्रजनक घोड़ी को कम से कम 3 बार कवर किया गया और वह गर्भधारण न कर सकी या गर्भावस्था के बार–बार प्रारंभिक भ्रूण हानि होना या बंजर घोड़ी जो प्रजनन के मौसम के अंत तक गर्भवती नहीं हो सकी या गर्भावस्था के किसी भी स्तर पर दोहराया गर्भपात के इतिहास के बाद में बांझपन होना, जिस के गर्भाशय में पुराना संक्रमण हो, योनि में स्राव हो या असामान्य मद चक्र हो।

संक्रमणकालीन यौन निष्क्रियता में प्रवेश करने से पहले समस्याग्रस्त घोड़ी की सितम्बर–अक्टूबर के दौरान पूरी तरह से प्रजनन सुदृढ़ता के लिए जांच की जानी चाहिए। घोड़ी का बसंत प्रजनन परियोजनाओं का मूल्यांकन किया जाना चाहिए। प्रारंभिक परीक्षा समय पर बांझपन के कारणों का पता लगाने के लिए गुदा स्पर्श परीक्षा का कार्य, योनि परीक्षा, गर्भाशय संस्कृति और कोशिका विज्ञान या गर्भाशय बायोप्सी भी शामिल हैं।

गुदा स्पर्श परीक्षा का कार्य और अल्ट्रासाउंड पशुचिकित्सा को मूत्र जननांगी अंगों का मूल्यांकन करने के लिए अनुमति देता है और असामान्यताओं को जानने में सहायक करता है। जैसे कि तरल पदार्थ की उपस्थिति या गर्भाशय और योनि से तरल निर्वहन या फौलिकल और सीएल की उपस्थिति, आदि। योनि परीक्षा एक स्पेकुलम के साथ और मैन्युअल दोनो तरीकों से किया जाना चाहिए। इस परीक्षा से योनि में मूत्र इकट्ठा होना या तरल निर्वहन होने के आंकलन के साथ ही गर्भाशय ग्रीवा (सरविक्स) या

योनि दीवारों के किसी भी असामान्यताओं को जान सकते हैं। मलाशय और योनि की रचना ठीक न होने पर घोड़ी में अकसर हवा खींचना (न्यूमोवैजाइना) के साथ बांझपन की समस्या हो सकती है।

विशिष्ट प्रजनन सुदृढ़ता परीक्षा में गर्भाशय की कोशिकाओं की जानकारी होनी चाहिए जो कि गर्भाशय एस्पीरेट या स्वैब पर किया जाता है। सूजन वाली कोशिकाओं की उपस्थिति का भी मूल्याकंन किया जाता है। विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं की उपस्थिति संक्रमण की अवधि और प्रकार दोनों को निर्धारित करता है। बैक्टीरिया या फंफूदी संबंधी रोगजनकों के कारण कोई भी बीमारी यदि गर्भाशय में मौजूद है तो वह गर्भाशय संस्कृति का निर्धारण करेगा। यदि कोई सूजन आदि का संकेत नहीं है तो पृथक जीव सामान्य आवासीय सूक्ष्म जीवों या गैर रोगजनक जीव हो सकते है। गर्भाशय बायोप्सी मौजूद सूजन की गंभीरता, ट्यूमर की स्थिति, रसौली और वार्धक्य से संबंधित परिवर्तन के प्रकार का मूल्यांकन करता है।

ऊपर दिए गए नैदानिक परीक्षण घोड़ी के बांझपन के उचित इलाज के लिए रणनीति गठन करने में मदद करते हैं। यहां तक कि प्राकृतिक प्रजनन के दौरान, एक घोड़ी के गर्भाशय में घोड़ा 50 मिलीलीटर या अधिक वीर्य जमा कर सकता है। शुक्राणु और वीर्य के अन्य घटकों के साथ–साथ रोगाणु भी गर्भाशय में जमा होते रहते है। वीर्य का अधिक भाग गर्भाशय में रहता है और सामान्य गर्भाशय के संकुचन और तीव्र गर्भाशय तीक्ष्ण प्रतिक्रियाओं द्वारा साफ होता रहता है। गर्म धारण करने वाली घोड़ी में वीर्य के गर्भाधान के 24–36 घंटे में यह सूजन साफ हो जाती है और भ्रूण गर्भाशय में टीके के 5–6 दिन में पहुँच जाता है यदि यह सूजन 36 घंटे से ज्यादा रहे तो यह अंतगर्भाशयकला के लिए हानिकारक हो सकता है। साथ ही यह अग्रणी सफल गर्भाधान में हस्तक्षेप कर सकते है। यदि घोड़ी उसके गर्भाशय से तरल पदार्थ का निवारण करने में असमर्थ है, बैक्टीरिया अग्रणी तेजी से गुणा करते हैं और इससे बाझंपन या गर्भपात की स्थिति आ सकती है। बांझपन के मामलों में चिकित्सा के लिए एंटीबायोटिक रोधी उपचार शामिल होते हैं, जैसे खारे पानी से घोड़ी के गर्भाशय की फलशिंग, जीर्ण सूजन के लिए प्रतिक्षोभण चिकित्सा, गर्भाशय उत्तेजक थेरेपी (ऑक्सीटोसिन द्वारा), मूत्र पूलिंग ठीक करने के लिए सर्जिकल प्रक्रियाएँ, गर्भाशय ग्रीवा क्षति /जखम या गुदा/योनि के फटने को दूर करने के लिए सर्जिकल प्रक्रियाएँ, या प्रोजेस्टेरोन पूरकता। गंभीर बीमारी उम्र बढ़ने के परिवर्तन की वजह से कुछ मामलों में घोड़ी प्रजनन के प्रयास को बंद करना चाहिए या गर्भावस्था बनाए रखने में असमर्थ मूल्यवान घोड़ी पर भ्रूण स्थानांतरण प्रदर्शन न करने का निर्णय लेना उचित है।

प्रबंधन

- संभावित समस्याग्रस्त घोड़ी की प्रारंभिक पहचान होनी चाहिए। शरद ऋतु और सर्दियों के दौरान बंजर घोड़ी को अलग रखना चाहिए व उसे औषधि प्रदान करनी चाहिए। इससे झुंड के प्रजनन दर में सुधार होगा।
- घोड़ी एवं घोड़े के जननांगों के लिए उचित और प्रभावी पूर्व प्रजनन स्वच्छता लागू किया जाना चाहिए। जहां तक संभव हो, कृत्रिम गर्भाधान तकनीक का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। इससे घोड़ी और घोड़े दोनों की प्रजनन प्रणाली में संक्रमण से बचाव होगा। कृत्रिम गर्भाधान और बेहतर घोड़े प्रबंधन के उपयोग दोनों ही इस योजना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इसलिए घोड़े की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।
- नियमित रूप से घोड़ी को पेट के कीड़े मुक्त करना चाहिए। साथ ही पोषण की योजना को समायोजित करना चाहिए जिससे घोड़ी न तो अतिरिक्त वजन की हो और न ही पतली हो।
- घोड़ी की रचना और संरचनात्मक दोषों और खुद को फिर से संक्रमित करने की प्रवृत्ति का शल्य चिकित्सा द्वारा इलाज किया जाना चाहिए।
- एक्सफोलिएटिव कोशिकीय परीक्षा और गर्भाशय ग्रीवा व गर्भाशय अस्तर अंतगर्भाशयकला के माइक्रोबियल संस्कृति परीक्षा प्रजनन के मौसम से पहले किया जाना चाहिए।
- यदि आवश्यक हो तो एंडोमेट्रियल बायोप्सी द्वारा नुकसान की सीमा और प्रजनन सफलता की संभावना जानी जा सकती है।
- यदि प्रतिदिन प्रकाश के 12 से 16 घंटे 4–6 सप्ताह के लिए घोड़ी को दिए जाएँ, तो घोड़ी का मद/ऋतु चक्र में परिवर्तन काल में तेजी आएगी। दिन का प्रकाश बढ़ने से पीनियल ग्रंथि प्रोत्साहित होगी और इसमें प्रजनन दर को बढ़ाने में मदद मिलेगी।

पशुओं में जाड़ बढ़ने की समस्या

वैभव भारद्वाज[1], विनय यादव[2] और गौरव कुमार[1]

[1]पशु शल्य चिकित्सा एवं विविकरण विभाग, [2]मादा पशु एवं प्रसूति रोग विभाग, लाला लाजपतराय पशुचिकित्सा एवं पशुविज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

गायों और भैसों में जाड़ बढ़ने की समास्या आम होती है। यह अक्षर पांच साल या उस से ज्यादा उम्र के पशुओं में देखी जाती है इसमें अक्षर दोनों तरफ की जाड़ बढ़ती है या कभी–कभी एक तरफ की भी बढ़ जाती है, जाड़ बढ़ने पर पशु पूरा चारा नहीं चबा पाता जिसके कारण अपच की दिक्कत हो जाती है और उसका वजन कम होने लगता है, ऐसी परिस्थिति में पशु का दूध कम हो जाता है जिसे पशु पालक को नुकसान होता है।

कैसे पता लगायें?

जिन पशुओं में जाड़ बढ़ने की समस्या होती है उनमें ये लक्षण अक्सर देखे जाते हैं –

1. मुँह से चारा गिरना।
2. जाड़ और गाल के बीच में तूड़ी फंसना।
3. जीभ और गाल के अंदरूनी हिस्से में घाव होना।
4. ज्यादा थूक बनना।
5. गोबर में तूड़ी आना।
6. चारा चबाते समय दर्द होना।
7. चारा चबाते समय एक तरफ सिर घुमाना।
8. मुँह से कर्ड–कर्ड की आवाज आना।
9. चारा पूरा ना खाना।
10. अफारा बनना।

उपाय

इसका इलाज अपने सरकारी पशुओं के अस्पताल में पशु चिकित्सक द्वारा किया जाता है। इसमें पशु चिकित्सक मुँह गैग (चित्र 1) लगाकर पशु के मुँह की जांच करता है और जाड़ में फंसी तूड़ी निकालकर पशु के मुँह की लाल दवाई से सफाई करता है इसके बाद पशु की जीभ एक तरफ पकड़ कर जाड़ खुरचने के ओजार (चित्र 2) से दूसरी तरफ की जाड़ घिस जाती है जिससे बढ़ी हुई जाड़ ठीक हो जाती है ऐसे ही दूसरी तरफ की जाड़ घिस जाती है इसके बाद लाल दवाई से दोबारा मुँह धोया जाता है और जाड़ पर बोरोग्लिसरिन का पेस्ट लगाया जाता है इसके बाद मुँह गैग हटा दिया जाता है।

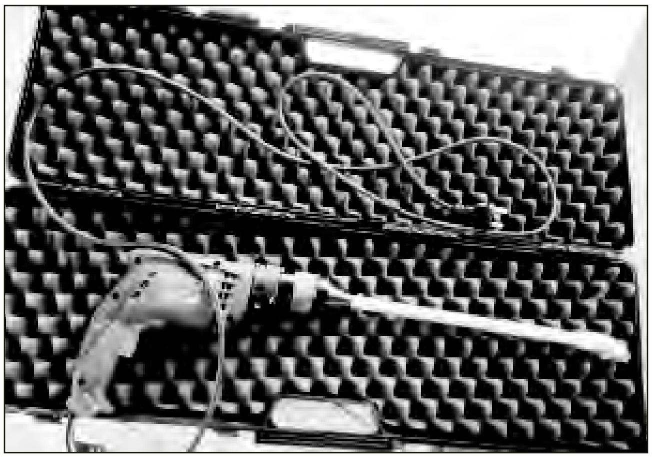

इलाज के बाद ध्यान रखने वाली बातें–

- पशु को इलाज के बाद 7 से 10 दिनों तक मांड और अधपका अनाज देना चाहिए।
- 10 दिनों के बाद पशु का खान पान सामान्य हो जाता है।

बकरियों में होने वाली मुख्य बीमारियां

सूदीप सोलंकी एवं दुर्गा गुर्जर
पशुचिकित्सा महाविद्यालय, नवानियां, उदयपुर

फडकिया :

बकरियों की यह एक प्रमुख बीमारी है जो अधिकतर वर्षा ऋतु में फैलती है। एक साथ रेवड़ में अधिक बकरियां रखने, आहार में अचानक परिवर्तन तथा अधिक प्रोटीनयुक्त हरा चारा खा लेने से यह रोग तीव्रता से बढ़ता है। यह रोग क्लोस्ट्रीडियम परफिजेन्स नामक जीवाणु के विष के कारण पैदा होता है। साधारणतः इस बीमारी में अफारा हो जाता है। अधिक ध्यान से देखने पर बकरी के अंगों में फड़कन (कम्पन) सी दिखाई देती है। इसी कारण इस रोग को फड़किया कहते है। इस रोग में पशु लक्षण प्रकट करने के 3–4 घंटे में मर जाता है। पेट में दर्द के कारण बकरी पिछले पैरों को पेट पर मारती है तथा सुस्त होकर मर जाती है। यही रोग का प्रमुख लक्षण है।

बकरी–चेचक (माता) :

यह एक विषाणुजनित रोग है जो रोगी बकरी के सम्पर्क में आने से फैलता है। इस रोग में बकरी के शरीर के ऊपर दाने निकल आते हैं। बीमार बकरियों को बुखार हो जाता है साथ ही कान, नाक, थनों व शरीर के अन्य भागों पर गोल–गोल लाल रंग के चकते हो जाते हैं जो फफोले का रूप लेकर अन्त में फूट कर घाव बन जाते हैं। बकरी चारा खाना कम कर देती है तथा उसका दूध उत्पादन कम हो जाता है। कहीं पर यदि पानी रखा हो तो पशु अपना मुंह पानी में डालकर रखता है। रोग के प्रकोप से बचने के लिए प्रतिवर्ष वर्षा से पहले रोग–प्रतिरोधक टीके लगवाने चाहिए। बीमारी होने पर प्रतिजैविक दवाइयों का प्रयोग करना चाहिए। जिससे दूसरे प्रकार के कीटाणुओं के प्रकोप को रोका जा सके। बीमार पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए तथा रोगी पशु के बिछौने तथा खाने से बची सामग्री और मृत पशु को जलाकर या जमीन में गाढ़ देना चाहिए।

खुरपका–मुंहपका रोग :

यह बकरियों का एक संक्रामक रोग हैं। यह रोग वर्षा ऋतु के आने के बाद आरंभ होता है। इस रोग में बकरियों के मुंह व खुर में छाले पड़ जाते हैं तथा मुंह से लार टपकती रहती है और बकरी इससे चारा नहीं खा पाती है। पैरों में जख्म हो जाने से बकरियां लंगड़ाकर चलने लगती है। चारा न खा पाने से बकरियां कमजोर हो जाती है। जिससे इनमें मृत्यु दर बढ़ जाती है तथा इनका शारीरिक भार व उत्पादन भी कम हो जाता है। इस रोग के विषाणु रोगी पशुओं के संपर्क से संक्रमित आहार व जल के ग्रहण करने से स्वस्थ बकरियों में प्रवेश करते है। इस रोग से प्रभावित बकरियों के अंगों को लाल दवा के घोल से धोना चाहिए। छालों पर मुख्य रूप से ग्लिसरीन लगाने से लाभ रहता है। वर्षा ऋतु से पहले बसंत के आरंभ में बकरियों को पोलीवेलेन्ट टीका लगा देना चाहिए। अतः रोगी पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिए तथा स्वस्थ होने के बाद ही समूह में वापिस रखना चाहिए।

न्यूमोनिया रोग :

इसे फेफड़े का रोग भी कहते है। बकरियों में श्वास संबंधी बीमारी या न्यूमोनिया रोग प्रायः अधिक मात्रा में होता है। इस रोग में पशु के फेफड़ों व श्वसन तंत्र में सूजन आ जाती है जिससे उनके श्वास लेने में कठिनाई आती है। इस रोग के कारण बकरियों तथा उनके बच्चों में मृत्यु दर अधिक होती है। यह रोग जीवाणु व विषाणु दोनों के प्रभाव से पनप सकता है। लेकिन पाश्च्युरेल्ला हीमोलिटीका नामक जीवाणु इस रोग को फैलाने में काफी सक्रिय माना जाता है। ठण्डे तथा प्रतिकूल मौसम के कारण यह रोग अति तीव्रता से फैलता है। बकरी को तेज बुखार आता है तथा मुंह–नाक से तरल स्त्राव निकलता है। बकरी खाना पीना छोड़ देती है तथा समूह से अलग खड़ी रहती है।

छोटे बच्चों को यह रोग विशेष रूप से प्रभावित करता है। न्यूमोनिया एक श्वास रोग होने के कारण इस संक्रमित पशु के सूंघने व छींकने मात्र से इसके कीटाणु स्वस्थ पशु में चले जाते है। यदि बकरियों में जीवाणुओं द्वारा न्यूमोनिया का जल्दी ही पता चल जाए तो प्रतिजैविक दवाइयों से इस

रोग का निदान हो सकता है। विषाणुजनित रोग में प्रतिजैविक दवाइयां देने से दूसरे संक्रामक जीवाणुओं को बढ़ने से रोका जा सकता है। पाश्च्युरेल्ला से जनित न्यूमोनिया में स्ट्रेप्टोसिलीन व एम्पीसिलीन 3–4 दिन देने से अधिक लाभ होता है। माइक्रोप्लाज्मा जनित न्यूमोनिया में आक्सीटेट्रासाइक्लिन काफी उपयोगी है। बकरियों के आवास व वातावरण का उचित प्रबंध करने से व पूर्ण आहार देने से रोग की संभावनाएं कम हो जाती है। बकरियों व बच्चों को अधिक ठण्ड व वर्षा से बचाने का उपाय करना चाहिए। बीमार बकरी को अलग रखकर उपचार करना चाहिए।

जोन्स रोग :

इस रोग का प्रमुख लक्षण बकरी का दिन–प्रतिदिन कमजोर होना व उसकी हड्डियां दिखाई देना है। यह रोग रोगी बकरी के संपर्क में आने से फैलता है। इस बीमारी के लिए कोई विशेष टीका उपलब्ध नहीं है तथा अंत में बकरी मर जाती है। यह एक जानलेवा बीमारी है। जिस रेवड़ में यह फैल जाती है, धीरे–धीरे उस रेवड़ को समाप्त कर देती है। इसलिए जैसे ही इस बीमारी से ग्रस्त पशु दिखाई दे, उसे तुरन्त खत्म कर देना चाहिए। रेवड़ में अधिक भीड़ नहीं होने देनी चाहिए।

जीवाणु–गर्भपात :

जो बकरी एक बार अपना बच्चा गिरा देती है वह बकरी पशुपालक के लिए अगले बच्चे तक भार बन जाती है, जिससे बकरी–पालक को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है। गर्भपात एक संक्रामक रोग है। ब्रुसेल्लोसिस, सालमोनेल्लोसिस, विब्रियोसिस एवं क्लेमाइडियोसिस आदि इस रोग के मुख्य कारण है। रोगी बकरी से जीवाणु मुत्र, गोबर, प्लेसेन्टा आदि द्वारा बाहर निकलते हैं तथा स्त्राव से सने हुए चारे को खाने, योनि को चाटने आदि ही कई कारणों से पशु बार–बार बच्चा गिराता है। रोगी बकरी के संपर्क द्वारा यह रोग बकरों के जननेन्द्रियो को प्रभावित करके रोगग्रस्त कर देता है जो कि इस रोग के संवाहक बन जाते हैं। रोगग्रस्त बकरी में मुख्य लक्षण गर्भपात होना है। गर्भपात होने से पूर्व योनि में सूजन आ जाती है, बादामी रंग का स्त्राव निकलता है व थन सूज कर लाल हो जाता है।

इस बीमारी के ईलाज व रोकथाम के लिए रोगी पशु को अलग कर देना चाहिए। इनके बाड़े को साफ रखना चाहिए। रोगी बकरी के पिछले भाग को कीटनाशक दवाइयों से साफ करते रहना चाहिए तथा योनि में भी फुरियाबोलस व हेबेटीन पैसरी आदि रखनी चाहिए। उचित निदान के बाद रोगग्रस्त मादा को समूह में नही रखना चाहिए एवं न ही प्रजनन के काम में लेना चाहिए।

खुरगलन रोग :

बकरियों में वर्षा से सर्दियों तक होने वाला यह प्रमुख रोग है। यह रोग स्प्रेफोरस, नेफ्रोफोरस नामक जीवाणु से पैदा होता है। मुख्य रूप से यह रोग गीली मिट्‌टी व वर्षा ऋतु में अधिकता से फैलता है। इस रोग में बकरी एक या अधिक पैरों से लंगड़ाकर चलती है। जिससे बकरी ठीक से चल नहीं पाती व धीरे–धीरे कमजोर हो जाती है। इसमें खुरों के बीच का मांस व खाल सड़कर मुलायम पड़ जाता है तथा अजीब सी दुर्गन्ध आती है।

इस रोग से बचाव के लिए बाड़े के दरवाजे पर पैर स्नान (फुट बाथ) बनाकर नीला थोथा आदि दवा के घोल में करीबन 5 मिनट तक पशु को खड़ा कर उसके बाद चरने भेजना चाहिए। खुर के बीच के घाव को ठीक से साफ कर दस प्रतिशत नीला थोथा या पांच प्रतिशत फार्मलिन से धोने पर आराम मिलता है तथा रोग का प्रकोप भी कम हो जाता है। इस रोग से बचाव के लिए पशुओं को गीले चरागाह में चरने के लिए नहीं भेजना चाहिए। खुरों के बढ़े हुए भाग को काटकर निकालते रहना चाहिए।

आफरा :

यह बकरियों में मुख्य रूप से पाया जाने वाला रोग है। इसमें गैंसों के बनने व एकत्रित होने से पेट फुल जाता है। यह रोग अधिकतर वर्षा व उसके बाद में जरूरत से अधिक हरा चारा, सड़ा हुआ व फफुंदयुक्त चारा खा लेने से होता है। इससे अधिक गैंस बनती है। कई बार बहुत सी बीमारियों की वजह से पशु बहुत समय तक एक ही करवट लेटा रहता है तब उसकी पाचन क्रिया सही ढंग से नहीं हो पाती है। जिससे पेट में गैंस एकत्रित होकर इस रोग का कारण बनती है। पेट में बनी गैंसें शरीर से बाहर न निकलने पर अंदर के अन्य भागों में दबाव डालती है जिससे मुख्य रूप से फेफड़े प्रभावित होते है तथा पशु को श्वास लेने में परेशानी होती है। पशु काफी बेचैन हो जाता है व बांयी ओर का भाग फुल जाता है। यदि पेट पर हल्के हाथ से मारे तो ढप–ढप की आवाज आती है। पशु के मुंह से झाग आने

लगते है तथा दर्द के कारण पेट पर लात मारता है। समय पर उपचार न होने पर बकरी की मृत्यु भी हो जाती है।

अफारा की पहचान होने पर पशु चिकित्स्क को बुलाकर ट्रोकार कैन्युला की सहायता से पेट की गैंसे निकाल दें। बकरी की आगे की टांगे ऊंचाई पर रखकर धीरे–धीरे पेट की मालिश करें जिससे गैस पेट से बाहर निकल जाती है तथा फेफडों पर दबाव कम पड़ता है। पशु को तारपीन का तेल 10–15 ग्राम, हींग 2 ग्राम व अलसी का तेल 70 ग्राम मिलाकर पिलाने से लाभ मिलता है। पिलाते वक्त ध्यान रखें कि तेल फेफड़ों में न जाएं। बकरियों को हरा व भीगा चारा अकेले नहीं खिलाना चाहिए। आफरा से बचने के लिए पशुओं को सड़ा–गला चारा व अधिक मात्रा में दाना नहीं खिलाना चाहिए।

दस्त :

यह रोग मुख्य रूप से बच्चों में 2–3 सप्ताह में होता है। इस रोग का मुख्य रोगकारक ई. कोलाई नामक जीवाणु होता है। बच्चों में इस रोग के कारण बुखार आ जाता है व तेज दस्त हो जाते है तथा खाना–पीना छोड़ देते हैं। इस रोग से बचाव के लिए बच्चों को शुरू में दिन में 3–4 बार आवश्यकतानुसार खीस पिलाना चाहिए। जिससे उनमें रोग–प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। इस रोग में प्रतिजैविक दवाइयां जैसे डाइजीन नियोमाइसिन व सेप्ट्रोन इत्यादि लाभदायक सिद्ध हुई हैं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. **पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम**
2. **पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)**
3. **निःशुल्क SMS सेवा**
4. **पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)**

फील्ड में नकली दूध/सिंथेटिक दूध में यूरिया की जाँच

सज्जन सिंह एवं सुजोय खन्ना

विस्तार शिक्षा निदेशालय,

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

दूध हमारे आहार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। दूध शरीर में एक संजीवनी की तरह काम करता है, इसकी रचना, उच्च पोषण शक्ति तथा सरलता से पच जाने के कारण ही इसको ''सम्पूर्ण प्राकृतिक आहार'' कहा जाता है। जो बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सभी के लिए फायदेमंद और सेहत बनाने वाला है। दूध हर जीव का प्रथम आहार है, जीव के जन्म से ही कुदरत ने उसे दूध का आहार प्रदान किया है। दूध में शरीर रचना वाले प्रोटीन, हड्डियाँ बनाने वाले खनिज, स्वास्थ्यवर्धक विटामिन एवं ऊर्जा प्रदान करने वाले कार्बोहाइड्रेट तथा वसा होती है। रोजमर्रा की जिन्दगी में सुबह–सुबह उठने के बाद एक कप गर्म–गर्म चाय (थोड़े दूध के साथ) की सभी को तलब होती है। दूध स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त लाभकारी तभी हो सकता है, जब वह शुद्ध हो। उसमें कुछ भी मिलावट आपको अस्वस्थ कर सकती है।

दूध में मिलावट मांग और सप्लाई में अंतर की वजह से होती है। सबसे सामान्य और व्यापक मिलावट तो गाय, भैंस के दूध में पानी मिलाकर उसकी मात्रा बढ़ाना है। इस मिलावट की खासियत यही है कि उपभोक्ता को लूटा जरूर जा रहा है, परन्तु पानी मिले दूध का सेवन करने वाले के स्वास्थ्य को कोई नुकसान नहीं पहुंचता। दूध को टिकाऊ बनाने के लिए भी उसमें तरह–तरह के रसायन मिलाएं जाते हैं। दूध में अगर पानी मिला हो तो बर्तन में उड़ेलते वक्त या गर्म करने पर मलाई की मात्रा आदि से पता चल जाता है। अगर बारीकी से जांच करनी हो तो लेक्टोमीटर का इस्तेमाल करते है। दूध बिना खराब हुए ज्यादा समय तक टिका रहे, इसलिए जब भी रसायन मिलाए जाते हैं, तो इस बात का विशेष ख्याल रखा जाता है कि केवल ऐसे पदार्थ मिलाए जाएं, जिनसे शरीर को नुकसान न पहुंचे।

सामान्यतः दूध में पानी की मिलावट की जाँच के लिए किसी समतल साफ सतह पर दूध की एक बूंद टपकाएं, अगर दूध शुद्ध होगा तो वह सीधी पंक्ति की तरह बहेगा और अपने पीछे एक सफेद गाढ़ी छाप छोड़ेगा, लेकिन अगर मिलावटी दूध होगा तो वह पानी की तरह बह जाएगा। मिलावटी दूध को उबालने के दौरान उबाल कम आता है, मिलावटी दूध को उबालने पर मलाई बहुल पतली आती है, मिलावटी दूध का स्वाद कुछ कसैला होता है। कई बार ऐसा दूध पीने से उल्टी भी हो सकती है।

सिंथेटिक दूध : सिंथेटिक दूध से गंभीर बीमारियां होने का खतरा बना रहता है।

सिंथेटिक दूध की संरचना : सिंथेटिक दूध में पानी 50 प्रतिशत, यूरिया 10 प्रतिशत, कॉस्टिक सोडा 5 प्रतिशत, कपड़े धोने का सोडा 5 प्रतिशत, सोयाबीन तेल 5 प्रतिशत, लवण / शक्कर 10 प्रतिशत, ग्लूकोज पाउडर 10 प्रतिशत।

कैसे बनता है सिंथेटिक दूध :

सिंथेटिक दूध की उपरोक्त संरचना मात्रा में यूरिया, कॉस्टिक सोडा, लवण, शक्कर एवं ग्लूकोज पाउडर एक बर्तन में लेकर बहुत अच्छी तरह मिश्रण बनाने के बाद उसमें नल का पानी मिलाया जाता है। उसके बाद सोयाबीन तेल एवं दूध पाउडर डाला जाता है। इस तरह कृत्रिम दूध तैयार हो जाता है, कृत्रिम दूध में गाय–भैंस के दूध के घटकों से तुलना करने पर एक भी पदार्थ असली दूध जैसा नहीं होता है। इस दूध के सेवन से शारीरिक विकास में बाधा, आंखों की रोशनी जाना, पेट में अल्सर, कैंसर और नपुंसकता जैसी कई व्याधियां हो सकती है। अगर किसी के सामने सिंथेटिक मिल्क यानि नकली दूध है तो गंध, रंग, स्वाद आदि के आधार पर कोई भी आसानी से समझ जाएगा कि मामला गड़बड़ है, परन्तु जब नकली दूध असली दूध में मिला देते है, तब दूध के गंध, रंग, स्वाद एवं एकरूपता के आधार पर मिलावट का पता लगाना काफी मुश्किल हो जाता है।

जांच के कुछ तरीके :

जांच का पहला तरीका यही है कि दूध में अंगुलियों को डुबोकर फिर आपस में रगड़कर देखना कि साबुन जैसी

चिकनाहट तो नहीं है, दूध को सूंघकर देखना आम दूध की गंध से फर्क तो नहीं है, आदि जैसे काम किए जा सकते हैं। अब अगले दौर में दूध की अम्लीय या उदासीन होता है। आप लिटमस कागज से इसकी जांच कर सकते है। लिटमस पेपर न हो तो हल्दी कागज का उपयोग भी कर सकते है। किसी फिल्टर पेपर को हल्दी के घोल में डुबोकर, बाहर निकालकर सुखा लीजिए, हल्दी कागज तैयार हो गया, दूध क्षारीय होने की स्थिति में हल्दी कागज का रंग लाल हो जाएगा। इसी तरह लाल लिटमस पेपर लेकर टेस्ट करने पर क्षारीय दूध होने पर लिटमस पेपर का रंग नीला हो जाता है। क्षारीयता का पता लगाने के लिए फिनॉफथेलीन घोल का इस्तेमाल भी किया जा सकता है। यदि दूध क्षरीय हो तो घोल का रंग गुलाबी हो जाता है। मान लीजिए असली दूध में कुछ मात्रा में सिंथेटिक दूध मिलाकर कोई व्यक्ति बेचता है, तब क्या करेंगे? ऐसी स्थिति में ऊपर बताए गए तरीकों से हो सकता है, कि यह जांच पाना मुश्किल होगा। हमने देखा है कि सिंथेटिक दूध बनाने में यूरिया एक प्रमुख रासायनिक पदार्थ है। प्राकृतिक दूध में भी यूरिया पाया जाता है, लेकिन बहुत ही कम मात्रा में इसलिये प्राकृतिक दूध में भले ही थोड़ा–सा सिंथेटिक दूध मिलाया गया हो, उस दूध में सामान्य से ज्यादा यूरिया होने की संभावना बढ़ जाती है। यूरिया की मौजूदगी की जांच करने का तरीका भी बहुत मुश्किल नहीं हैं, परन्तु उसमें एक विशेष रसायन की जरूरत होती है, जो हर जगह नहीं मिल पाता है और मंहगा भी होता है।

पेरा–डाईमिथाईल–एमिनो–बेंजाल्डिहाइड (डी.एम.ए.बी.) यूरिया से क्रिया करने पर पीले रंग के पदार्थ में बदल जाता है। दूध के सेम्पल में पेरा–डाईमिथाईल–एमिनो–बेंजाल्डिहाइड की एक–दो बूंद डालने पर दूध का रंग पीला पड़ जाए, तो उसे दूध में यकीनन यूरिया ज्यादा मात्रा में मौजूद है। एक बात ध्यान देने की है कि शुद्ध दूध के साथ यह घोल पीला रंग नहीं देता है। यह परीक्षण आप एक अन्य तरीके से भी कर सकते है। फिल्टर पेपर की एक पट्टी लीजिए। इस पट्टी को पेरा–डाइमिथाईल–एमिनो–बेंजाल्डिहाइड के घोल में डूबोकर सूखा लीजिए। इब इस पट्टी का रंग पीला हो जाए तो दूध में यूरिया मिलाकर बनाया गया नकली दूध मिला हुआ है।

प्राकृतिक दूध में 45–55 मिलीग्राम / 100 मिलीलीटर यूरिया पाया जाता है, यानि 1 लीटर असली दूध में लगभग आधा ग्राम यूरिया मौजूद होता है। डी.एम.ए.बी का घोल बनाने के लिए 1.6 ग्राम डी.एम.ए.बी. को 90 मिलीलीटर इथाइल अल्कोहल और 10 मिलीलीटर सांद्र नमक के अम्ल में घोला जाता है।

फील्ड में बनावटी / नकली दूध में यूरिया की जाँच

विधि :

- सोखता कागज पर गुलाबी रंग के टेस्ट द्रव्य की एक बूँद डालकर सूख जाने दें।
- दूध के सैम्पल की एक बूँद, उसी सोखते कागज पर द्रव्य की सूखी हुई बूँद पर डाल दें।

पहचान :

नकली / यूरिया युक्त दूध :

- दूध की बूँद के चारों तरफ पीले रंग का घेरा उत्पन्न होना।
- असली दूध (0.2 प्रतिशत) से कम यूरिया युक्त दूध।
- दूध की बूँद के चारों तरफ कोई रंग का न होना या हल्का गुलाबी रंग ही रहना।

नोट : अगर यह संशय हो कि नकली दूध में असली दूध भी मिलाया गया हैः 10 मि.ली. दूध इतना उबाले कि आधा रह जाए और उपरोक्त टैस्ट करें।

सामान्यता :

नकली दूध बनाने के लिए लगभग 1.0 प्रतिशत यूरिया का प्रयोग किया जाता है, जबकि असली दूध में यूरिया की मात्रा बहुत कम (0.07 प्रतिशत) होती है। इससे अधिक मात्रा में यूरिया का पाया जाना नकली दूध की ओर अंकित करता है।

कैसे करें नकली दूध की पहचान :

सिंथेटिक दूध में साबुन जैसी गंध आती है, जबकि असली दूध में कुछ खास गंध नहीं आती। असली दूध का स्वाद हल्का मीठा होता है, नकली दूध का स्वाद डिटर्जेंट और सोडा मिला होने की वजह से कड़वा हो जाता है। असली दूध स्टोर करने पर अपना रंग नहीं बदलता, नकली दूध कुछ वक्त के बाद पीला पड़ने लगता है। अगर दूध में यूरिया भी हो तो हल्के पीले रंग का ही होता है, वहीं अगर सिंथेटिक दूध में यूरिया मिलाया जाए तो ये गाढ़े पीले रंग का दिखने लगता है। अगर हम असली दूध को उबालें तो

इसका रंग नहीं बदलता, वहीं नकली दूध उबालने पर पीले रंग का हो जाता है। असली दूध को हाथों के बीच रगड़ने पर कोई चिकनाहट महसूस नहीं होती। वहीं नकली दूध को अगर आप अपने हाथों के बीच रगड़ेंगे तो आपको डिटर्जेंट जैसी चिकनाहट महसूस होगी। मिलावटी और सिंथेटिक दूध पीने से आपको फूड पॉयजनिंग हो सकती है। उल्टी और दस्त की शिकायत हो सकती है।

किडनी और लीवर पर भी बेहद बुरा असर पड़ता है। स्किन से जुड़ी बीमारी भी हो सकती है। इससे कैंसर तक हो सकता है। कृत्रिम दूध स्वास्थ्य के लिये विशेषकर बच्चों, गर्भवती महिलाओं, बुजुर्गों और हृदय व गुर्दे की बीमारी से पीड़ित लोगों के लिए बेहद नुकसानदेह है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों के मुताबिक कास्टिक सोडे में मौजूद सोडियम से अत्यधिक तनाव की बीमारी हो सकती है। बुजुर्गों के लिए तो यह और भी ज्यादा नुकसानदायक है। हृदय रोगियों के लिए भी घातक साबित हो सकता है। कास्टिक सोडे के कारण शरीर लाइसिन को इस्तेमाल नहीं कर पाता है। लाइसिन नामक एमीनो एसिड बच्चों के विकास के लिए जरूरी है। इसके सेवन करने से आँतों में घाव होने का खतरा भी पैदा हो जाता है।

दूध की मिलावट रोकने के लिए वैज्ञानिकों ने एक वोल्टामीटिक तकनीक पर आधारित एक विशेष मशीन विकसित की है, जिसे इलैक्ट्रानिक टंग नाम दिया गया है। यह मशीन सिंथेटिक दूध में यूरिया, डिटर्जेंट, चीनी, नमक आदि की सटीक जांच करती है, बस आपको दूध का 10 एम.एल. सेम्पल देना होगा, जो कि 2 मिनट में ही दूध की शुद्धता का प्रमाण दे देगा। इस उपकरण की कीमत 20 हजार रुपये है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)
3. नि:शुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

ऑक्सीटोसिन हार्मोन का दुधारू पशुओं में प्रभाव

रीतू रानी, सुरेन्द्र कुमार एवं संजय यादव

पशुजन्य उत्पाद प्रद्यौगिकी विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

ऑक्सीटोसिन हार्मोन बच्चे के जन्म व जेर गिराने में मदद करने के साथ–साथ एक अति आवश्यक दूध उत्क्षेपक हार्मोन भी है जो मुख्यतः अन्तः ग्रंथि और गर्भाशय से निकलता है। इसी कारण ऑक्सीटोसिन हार्मोन को विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा आवश्यक ड्रग सूची में शामिल किया गया है। ऑक्सीटोसिन पशुओं की ल्योटी में दूध उतारने की अदभुत क्षमता रखता है। ऑक्सीटोसिन के प्रयोग को लेकर पशुपालकों में बहुत सारी भ्रान्तियां है। इनमें पशुओं के स्वास्थ्य में होने वाले दुष्प्रभाव तथा साथ ही मनुष्यों में ऑक्सीटोसिन के प्रयोग द्वारा प्राप्त दूध के उपभोग से होने वाले तथाकथित दुष्प्रभाव सम्मिलित है जिनको तुरंत हल करने की आवश्यकता है। दूध ल्योटी में बनता है और दोहन तक ल्योटी में ही रहता है। ल्योटी में दूध को दो हिस्सों में बांटा जा सकता है, जो हिस्सा थन और बड़ी दुग्ध वाहिनियों में मिलता है उसे सिस्टर्न दूध कहते हैं तथा जो हिस्सा छोटी वाहिनियों और कोष्ठक में होता है उसे कोष्ठक दूध कहते हैं। सिस्टर्न दूध आसानी से ल्योटी से निकल आता है पर कोष्ठक दूध का ल्योटी से निकालना इसलिए जरूरी होता है, क्योंकि अगर इस दूध को ल्योटी से न निकाला जाए तो यह ल्योटी में दबाव बनाकर दूध निर्माण की प्रक्रिया को बाधित करता है।

इसके अतिरिक्त ल्योटी में बचे हुए दूध में संक्रमण को रोकने के लिए भी इस दूध को निकालना बहुत ही जरूरी है। कुछ क्रियाएं जैसे बच्चे द्वारा स्तनपान, ल्योटी का धोना व मालिश करना या सहलाना अथवा दूध निकालने से पहले बछड़े को दिखाने पर ऑक्सीटोसिन हार्मोन का स्त्राव पीयुशिका ग्रंथि के पिछले भाग से होता है। ल्योटी के अंदर पार्श्व संवेदी तंत्रिकाएं होती है जो थन चूसने पर या दोहने पर इन आवेगों को मेरूरज्जा से ले जाकर पश्च–पीयुशिका तक पहुँचती है। पीयुशिका में ऑक्सीटोसिन हार्मोन का निर्माण होता है, जहाँ से यह रक्त द्वारा थन की ग्रंथियों में पहुँचता है और कोष्ठक को संकुचित कर दूध निष्कासन करता है।

ऑक्सीटोसिन के प्रभाव की समयावधि

ऑक्सीटोसिन हार्मोन का अर्धायु काल 2–3 मिनट का होता है। इस हार्मोन की मात्रा दुधारू पशु के खून में बहुत कम होती है परन्तु दूध निकालने के दौरान यह मात्रा बढ़ जाती है जो ल्योटी से दूध के दोहन के लिए जरूरी है। बच्चे को दूध पिलाने, मशीनों की आवाज सुनने, दूध निकालने के स्थान पर पशुओं को ले जाने पर, ग्वालों को देखने से तथा दूध दुहने के समय दाना डालने पर भी इस हार्मोन का उत्पादन होता है। कटड़े/बछड़े द्वारा थन चूसने, से सबसे ज्यादा ऑक्सीटोसिन हार्मोन का उत्पादन होता है। दूध निकालते समय खून में ऑक्सीटोसिन की मात्रा 16.6 माइक्रोयूनिट प्रति मि.लि. तक पहुँच जाती है जो केवल 2 से 3 मिनट तक ही रहती है। इतने कम समय में ही यह हार्मोन दूध उत्सर्जन करने में कामयाब हो जाता है और फिर खून में मौजूद एंजाइम ऑक्सीटोसिन को नष्ट कर देते हैं।

दूध संरचना में फर्क

ऑक्सीटोसिन हार्मोन की मात्रा दूध दुहने के दौरान रक्त में बहुत ही कम होती है। यदि पशु के दूध निकालने के

लिए अधिक ऑक्सीटोसिन की मात्रा लगाई जाए तो दूध तो जल्दी उतर आता है लेकिन इससे दूध की संरचना पर प्रभाव पड़ता है। दूध में वसा की मात्रा बढ़ जाती है, जबकि शर्करा कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त सोडियम एवं क्लोराइड लवण बढ़ जाते हैं, जबकि पोटेशियम की मात्रा कम हो जाती है, जिसके कारण कोष्ठकों की कोशिकाओं की पारगमन क्षमता (परमाबिलिटी) बढ़ जाती है। जिसकी वजह से दूध के कुछ तत्व जैसे पोटेशियम एवं लैक्टोज प्लाज्मा में आ जाते हैं व खून में पाए जाने वाले पदार्थ सोडियम, क्लोराइड एवं बायोकॉर्बोनेट दूध में आ जाते हैं। इस तरह से दूध और खून के तत्वों में अदला–बदली हो जाती है जिससे दूध की संरचना में फर्क आ जाता है।

पशु की सेहत पर असर

ऑक्सीटोसिन की कम मात्रा (2 आई.यु.) से पशु के स्वास्थ्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता व दूध भी पूरा उतर जाता है, परन्तु बहुत अधिक मात्रा (50 या 100 आई.यु.) पशुओं के मदकाल एवं प्रजनन क्षमता को प्रभावित करती है। इसे देने से दूध के संघटन में कुछ परिवर्तन आ जाते हैं। इस हार्मोन का बहुत अधिक प्रयोग गाभिन पशुओं से बच्चा लेने में भी किया जाता है क्योंकि यह हार्मोन प्रसव के समय मांसपेशियों को संकुचित करता है जिससे गर्भाशय भी संकुचित हो जाता है। इसलिए इस हार्मोन को सीमित मात्रा में पशु चिकित्सों की देखरेख में ही लगाया जाना चाहिए।

उपभोक्ता की सेहत पर असर

पशुओं में ऑक्सीटोसिन टीके के उपयोग से उत्पादित दूध पीने से मानव शरीर पर किसी भी प्रकार के गलत प्रभाव पड़ने के कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। ऑक्सीटोसिन अर्धायु काल बहुत कम (2–3 मिनट) होने के कारण इस हार्मोन की मात्रा रक्त में बहुत जल्दी कम हो जाती है और कुछ ही मिनटों के अंतराल में न के बराबर रह जाती है, जिसका मानव स्वास्थ्य पर कोई दुष्प्रभाव संभव नहीं हैं। पशुपालकों द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली मात्रा (1–2 आई.यु.) एक बहुत कम मात्रा है और इस मात्रा में पशुओं में ऑक्सीटोसिन का टीका लगाने से दूध में इसकी किसी सार्थक मात्रा का अवशेष रह जाना संभव नहीं है। ऑक्सीटोसिन एक प्रोटीन हार्मोन होने के कारण, यदि कुछ मात्रा दूध में अवशेष के रूप में आ भी जाती है तो मनुष्य के पाचन तंत्र में पाचक अम्लों द्वारा उसे तुरंत अमोनो अम्लों में विघटित कर दिया जाता है, फलस्वरूप उसका कोई प्रभाव शेष नहीं रह जाता। ऐसा विदित होता है ऑक्सीटोसिन के संबंध में जनता में बहुत सारी भ्रान्तियां हैं जिसका कोई प्रमाणिक तथ्य नहीं है फिर भी जो अवयव पशुपालन द्वारा ऑक्सीटोसिन के रूप में प्रयोग किया जाता है उसका विश्लेषण आवश्यक है। जिससे यह पता लग सके उसमें ऑक्सीटोसिन के अलावा और कितने रासायनिक उपलब्ध है और उनकी मात्रा कितनी है। वैज्ञानिकों/विशेषज्ञों द्वारा संतुत एवं समुचित मात्रा में ऑक्सीटोसिन का पशुओं की जीवन रक्षा के लिए उपयोग करना तर्कसंगत है परन्तु इसका निरंतर दूध उतारने के लिए प्रयोग करना तर्कसंगत नहीं हो सकता। इस दिशा में समुचित दिशा निर्देश अनिवार्य है।

दूध उत्प्रेक्षण में प्रभाव

तेज आवाज, पशु के दूध निकलने के स्थान में परिवर्तन, नए ग्वाले या दूधिये द्वारा दूध निकालना, अत्यधिक पेशी क्रिया, पशु के शरीर में दर्द जैसी विपरीत परिस्थितियाँ ऑक्सीटोसिन हार्मोन का उत्पादन कम या खत्म कर देती हैं, जिससे दूध निष्कासन में बाधा उत्पन्न होती है।

ऑक्सीटोसिन एक दूध उत्प्रेक्षण हार्मोन है जो ल्योटी से पूरी तरह दूध निकालने में सक्षम है और ल्योटी को पूरी तरह खाली करके नए दूध के निर्माण के लिए जगह उपलब्ध करवाता है। ऑक्सीटोसिन जैसा प्रभाव देने वाला टीका सरकार द्वारा प्रतिबंधित होने के बावजूद भी अधिकांश पशुपालकों को आसानी से उपलब्ध होने के कारण वे इसका अंधाधुंध प्रयोग कर रहे हैं, जो कि अनुचित है।

इस टीके का प्रयोग केवल उन पशुओं में किया जाना चाहिए, जिनमें दुग्ध दोहन की प्रक्रिया समुचित न हो। यह कठिनाई अधिकतर भैंसों में होती है। इन टीकों के अधिक प्रयोग से ल्योटी की कोशिकाओं की संरचना भी प्रभावित हो सकती है। पशु का दुहन उसे प्यार से सहलाते हुए तनाव रहित परिस्थितियों में करना चाहिए ताकि पशु के अंदर से ही ऑक्सीटोसिन हार्मोन का सामान्य संचार हो सके व पशु से अधिक से अधिक दूध प्राप्त किया जा सके। पशु के आसपास का वातावरण शांत, स्वच्छ तथा अनुकूल होना चाहिए। ऑक्सीटोसिन हार्मोन का प्रयोग केवल पशु–चिकित्सक की सलाह पर ही उपयुक्त मात्रा में करना चाहिए।

पशु व्यवहार के अध्ययन द्वारा पशुधन प्रबंधन किस प्रकार आसान बनाया जा सकता है?

अरुण कुमार झीरवाल एवं गीतेश मिश्र
पशुचिकित्सा और पशुविज्ञान महाविद्यालय,
राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

पशुओं के व्यवहार को समझने से प्रबंधन की सुविधा होगी और पशुपालक की सुरक्षा व पशु कल्याण दोनों में सुधार होगा। पशुओं में तनाव कम करके उत्पादन काफी हद तक सुधारा जा सकता है। आधुनिक अध्ययन यह प्रदर्शित करते हैं कि तनाव का पशुओं के प्रदर्शन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसकी वजह से पशुओं कि गर्भ धारण दर, प्रतिरोधक क्षमता व पाचन तंत्र पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यहाँ हम पशुओं के व्यवहार का उनकी दृष्टि, चाल, आवाज, वातावरण आदि के संदर्भ में अध्ययन करेंगे।

दृष्टि

पशुओं की दृष्टिपरस काफी व्यापक होती है। गाय तथा भैंस जैसे पशुओं में यह 330° तक होती है जबकि भेड़ में यह 300° तक होती है। एक अपरिचित पशु हिलती–डुलती वस्तुओं तथा मनुष्यों की वजह से डर सकता है। पशुओं की व्यापक दृष्टिपरस को सीमित करके उन्हें अचानक विस्मृत होने से रोका जा सकता है जैसे घोड़े में इस विधा का प्रयोग किया जाता है।

रोमांथी पशुओं में गड्ढे अथवा गहराई के लिए भी एक समझ पायी जाती है। चलते समय उन्हें गड्ढों आदि का ज्ञान नहीं हो पाता है इसलिए कई बार पशु चलते समय रूक कर सिर नीचे करके गड्ढे आदि पहचानने की कोशिश करते हैं। इसी वजह से कई बार पशु नाली इत्यादि देख कर रूक जाते हैं।

पशुओं में रंगों के लिये भी एक समझ पायी जाती है। ये द्वीवर्णी होते हैं अर्थात् ये दो रंगों पीला–हरा तथा नीला–बैंगनी की ही पहचान कर पातो हैं। यही बात इन्हें अचानक हुई हलचल के लिये संवेदनशील बना देती है। इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि चरने वाले पशु किसी भी तरह कि परछाई या हल्के–गहरे रंगों का उच्च विभेदन देखकर विस्मृत हो जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में उनके मस्तिष्क का 'अमिगडेला' हिस्सा सक्रिय हो जाता है जो उन्हें डर का आभास करवाता है। इसी वजह से कई बार पशु एक इमारत जो अंधेरी दिखती है, में अंदर घुसने से मना कर देता है। यह समस्या चमकदार दिनों में काफी आम है। यदि इमारत में सूरज की रोशनी दिखाई दे तो पशु आसानी से प्रवेश कर जाता है। इसका एक उपाय यह भी हो सकता है कि इमारत में सफेद प्लास्टिक की चद्दरें लगाई जाए जो की धोने में भी आसान रहती हैं तथा जिनकी प्रतिदीप्ति से अंदर रोशनी भी रहेगी।

आवाज

पशु उच्च ध्वनि के प्रति ज्यादा संवेदनशील होते हैं। अवांछित शोर पशु के लिए तनाव का कारण बन सकता है। प्रयोगों के अनुसार लगातार 100 डी.बी. तक की उच्च ध्वनि से पशुओं में वजन में भी कमी हो सकती है। ध्यान देने लायक बात यह है कि 75 डी.बी. तक की मिश्रित ध्वनि या संगीत पशुओं का वजन बढ़ा भी सकता है। कुछ उदाहरण ऐसे भी सामने आए हैं जिनमें संगीत का उपयोग करके पशुपालकों ने दुग्ध उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हासिल की है। पशु आवास गृह के समीप किसी भी प्रकार के अवांछित शोर से बचना चाहिए।

फ्लाइट जोन

'फ्लाइट जोन' किसी भी पशु की व्यक्तिगत जगह होती है जिसमें किसी भी अवांछित व्यक्ति के प्रवेश करने पर पशु दूर हट जाता है। पशुपालकों के लिए फ्लाइट जोन की समझ उपयोगी साबित हो सकती है।

एक पशु का फ्लाइट जोन

खुले में पाली किसी भी गाय का फ्लाइट जोन लगभग 50 मीटर का होता है जबकि एक स्थायी जगह

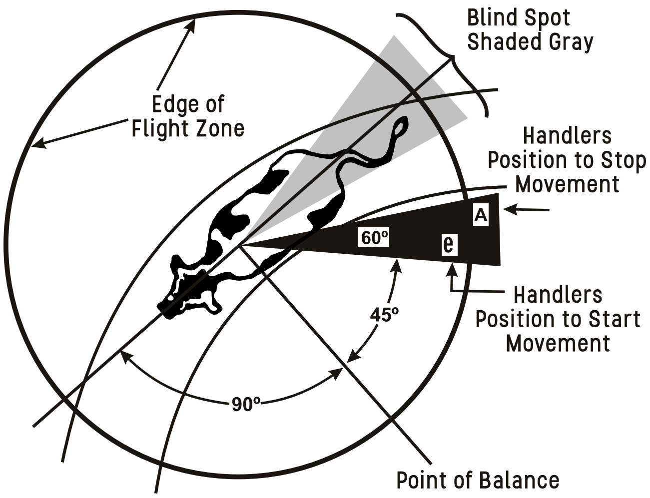

चरने वाली गाय का फ्लाइट जोन लगभग 2—8 मीटर का होता है। यह परिमाप पशु के साथ नरम व्यवहार के साथ घटता जाता है। इस फ्लाइट जोन का अतिक्रमण होने पर पशु या तो दूर हट जाएगा अथवा आक्रामक हो जाएगा। यदि कोई व्यक्ति पशु के समीप चित्र में छायांकित भाग की तरफ से संतुलन बिन्दु की ओर प्रवेश करता है तो पशु आगे चलेगा तथा जब व्यक्ति इसके फ्लाइट जोन से बाहर आ जाएगा तो पशु रूक जाएगा।

एकाकीपन

सामान्यतया सभी पशु समूह में रहना पसंद करते हैं किन्तु उन्हें घरेलू माहौल के लिए अनुकूलित किया जा सकता है। यदि कोई पशु एकाकीपन की वजह से आक्रामक हो रहा हो तो अन्य पशुओं को भी साथ रखा जाना चाहिए। व्यवहारिक रूप से जब किसी अक्रामक गाय में कृत्रिम गर्भाधान किया जा रहा हो तो उसके समीप एक षांत गाय को रखना काफी मददगार साबित हो सकता है। इसके अतिरिक्त फार्म पर गायों को चराते समय यदि उनके मुख परस्पर आमने—सामने हो तो काफी ठीक रहेगा।

अनुभव तथा वातावरण का प्रभाव

किसी भी पशु का किस प्रकार किया जाए यह काफी हद तक उस पशु के पूर्ववर्ती अनुभव पर भी काफी हद तक निर्भर करता है। यह मुख्यतया तीन कारकों पर निर्भर करता है— आनुवंशिकी, नस्ल तथा पूर्ववर्ती अनुभव।

अतिरिक्त अनुकूल वातावरण प्रदान करने से पशुओं में आकस्मिक उत्तेजना घटाई जा सकती है। पशु पिछले कई महीनों तक के विपरीत अनुभव याद रख सकते हैं। किसी भी व्यक्ति की किसी पशु के प्रति प्रथम पहुँच बहुत ही अच्छी होनी चाहिये क्योंकि यह काफी हद तक उस पशु के भविष्य के प्रदर्शन को भी प्रभावित करता है। पशुओं की देसी नस्लें काफी संवेदनशील होती है। ये अपने पशुपालक के साथ एक किस्म का जुड़ाव विकसित कर लेती हैं, किसी अन्य व्यक्ति का इसके फ्लाइट जोन में प्रवेश पशु में आकस्मिक विस्मृति पैदा कर सकती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पशुओं के व्यवहार का अध्ययन पशुधन प्रबंधन में सुधार तथा पशुओं का तनाव घटाने में मददगार साबित हो सकता है। तनाव में यह कमी पशु में वजन वृद्धि, प्रजनन व स्वास्थ्य वृद्धि में प्रदर्शित हो सकती है।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

पशु आहार ब्लॉकः पशुओं के लिए सम्पूर्ण आहार

सज्जन सिंह एवं दलजीत सिंह

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार।

हमारे देश में 45 प्रतिशत सूखे चारे, 44 प्रतिशत दाने एवं 30 प्रतिशत हरे चारे की कमी है। ऐसे में अगर फसल अवशेष और उपोत्पाद की क्षमता बढ़ाकर पशुओं को खिलाया जाये तो पशु उत्पादन बढ़ सकता है। हर साल भारतवर्ष का कुछ भाग सूखे या बाढ़ की चपेट में आ जाता है जिसके फलस्वरूप पशु व जन–आबादी बहुत प्रभावित होती है। उस अवस्था में तूड़ी व पराली जैसे मुख्य सूखे चारे को अधिकता वाले स्थानों से कमी वाले स्थानों तक ले जाया जाता है। लेकिन इन सूखे चारों का घनत्व कम होने के कारण इनको वाहन में लादना व ले जाना बहुत अधिक खर्चीला तथा असुविधाजनक होता है। अतः इन सुखे चारों में आवश्यकता अनुसार दाना, खनिज लवण मिलाकर एक विशेष मशीन द्वारा ब्लॉक के रूप में बदला जाता है। इस प्रकार से तैयार किया गया आहार कई प्रकार से उपयोगी सिद्ध होता है।

संपूर्ण आहार ब्लॉक

यह फसल अवशेष, दाना और उपोत्पाद को मिला कर पशुओं का आहार बनाने का एक भौतिक तरीका है। इसमें कोई रसायन पदार्थ का प्रयोग नहीं किया जाता। इस विधि में पशु आहार के लिये निम्न स्तरीय चारे को दाने के साथ निश्चित मात्रा में मिलाकर ब्लॉक बनाने वाली मशीन में 4500 पौंड प्रति स्क्वेयर इंच के दबाव से संपूर्ण आहार ब्लॉक बनाये जाते है। इस मशीन में 25 हार्स पावर की बिजली की मोटर लगी होती है।

संपूर्ण आहार ब्लॉक के लाभ

- ब्लॉक बनाने में कम गुणवत्ता वाले सूखे चारे जैसे धान का पुवाल, गन्ने की खोई और सरसों की भूसी इत्यादि का उपयोग भी किया जा सकता है जिन्हें पशु आमतौर पर न के बराबर खाते हैं।
- ब्लॉक को वाहन में लादना व ले जाना कम खर्चीला तथा सुविधाजनक होता है।
- शहरों में उपलब्ध कम स्थान में भी इनका भण्डारण किया जा सकता है।
- पूर्ण आहार ब्लॉक बनाने में गोलीदार आहार बनाने से कम खर्चा होता है।
- इसमें भिन्न–भिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ इस रूप में विद्यमान होते हैं कि पशु अपनी इच्छा अनुसार विभिन्न अंशों की छटनी करके न खा सके।
- इसमें सुखा चारा तथा दाना आवश्यक अनुपात में डाला जाता है।
- यह पशुओं द्वारा अधिक पसन्द से खाया जाता है।
- लम्बे समय तक रखरखाव से भी खराब नहीं होता।
- इसके खिलाने से पशुओं की ऊर्जा, प्रोटीन, खनिज लवण तथा विटामिनों की आवश्यकता पूरी हो जाती है।
- पूर्ण आहार ब्लॉक बनाने से सूखे चारे का घनत्व चार गुणा बढ़ जाता है।
- संसोधन विधि द्वारा तैयार होने के कारण इसमें पाचक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है।
- परम्परागत तरीके से खिलाने के बजाए पूर्ण आहार ब्लॉक के रूप में खिलाने से दूध की मात्रा बढ़ जाती है।

आहार ब्लॉक बनाने की विधि

पशुओं की विभिन्न अवस्थाओं के लिए तालिका अनुसार विभिन्न घटकों को मिला लिया जाता है–

- पानी की मात्रा इस प्रकार ली जाती है कि मिश्रण में नमी 17 प्रतिशत हो जाए।
- इन सबको अच्छी तरह मिला लिया जाता है और 12–24 घण्टों के लिए छोड़ दिया जाता है ताकि तुड़ी या पराली के कण नमी सोख कर समरूप हो जाएं।
- अब खाद्य मिश्रण को एक विशेष मशीन में भर कर ब्लॉक में बदल दिया जाता है।
- पूर्ण पशु आहार ब्लॉक में हरा चारा भी 96 घण्टे तक सुखाने के बाद सम्मिलित किया जा सकता है।

तालिकाः पूर्ण आहार ब्लॉक में विभिन्न घटकों का अनुपात व पोषक तत्त्वों की मात्रा

खाद्य पदार्थ (कि.ग्रा. / 100 कि.ग्रा.)	पशुओं की श्रेणी		
	भरण पोषण	विकासशील	दुधारू
तुड़ी / पराली	74	60	30
बरसीम	—	—	30
सरसों की खल	—	19	15
चावल का चोकर (तेल रहित)	9	5	—
जौ	—	—	10
यूरिया	2	1	—
शीरा	10	10	10
खनिज मिश्रण	2	2	2
नमक	1	1	1
चूना	2	2	2
विटामिन	25 ग्राम	25 ग्राम	25 ग्राम
पोषक तत्व (प्रतिशत)			
कुल प्रोटीन	9.5	12	9.6
पचनीय प्रोटीन	5.5	8.0	7.7
कुल पचनीय तत्व	58.5	61.5	62.6

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857 (पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

पशुओं के सम्पूर्ण विकास में सल्फर की भूमिका

सुमन चौधरी[1], संदीप कुमार[2] एवं स्नेह गोयल[1]

[1]सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, कॉलेज ऑफ बेसिक साईंस एवं ह्यूमिनिटीज़,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार-125004
[2]पशु जैव दैहिकी एवं जैव रसायन विभाग,
लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

सल्फर क्या है?

सल्फर फसल उत्पादन के लिए आवश्यक 17 तत्वों में से एक है। जो कि कई पोषक तत्वों का एक संयोजन है। सल्फर प्राकृतिक तौर पर मिट्टी में कार्बनिक सल्फेट एवं वायु में अकार्बनिक सल्फर डाइ ऑक्साइड के रूप में मौजूद है। साथ ही यह नमक के गुबंदो और ज्वालामुखी में उच्च स्तर पर पाया जाता है।

पशुओं के चारा स्त्रोत व पानी में भी सल्फर विद्यमान होता है। सल्फर जुगाली करने वाले जानवर विशेषकर भेड़ और मवेशियों के स्वास्थ्य के लिए, उनके ऊन और दुध के उत्पादन के लिए आवश्यक तत्व है।

सल्फर के फायदे :

(1) **अमीनो एसिड व विटामिन** : पशुओं के आहार में सल्फर का उचित प्रयोग करने से उनके रूमेन में सूक्ष्मजीवों का विकास होता है जो अमीनो एसिड के संतुलन में सुधार करते है। सल्फर से अमीनो एसिड (सिस्टीन और मेथियोनीन), विटामिन (शियामिन और बायोटिन) और एंजाइमो के रूमेन माइक्रोबियल संक्ष्लेषण में मदद मिलती है। पोषण विशेषज्ञ मवेशियों के आहार में सल्फर या सल्फेट के 0.2 प्रतिशत की सलाह देते है।

(2) **ऊन और डेयरी उत्पादन** : भेड़ और बकरियों में उनके बाल व ऊन उगाने के लिए बाकि मवेशियों की तुलना में अधिक सल्फर की आवश्यकता होती है। इसी के साथ ऊन उगने वाले मौसम में तो और भी सल्फर की आवश्यकता बढ़ जाती है।

दुधारू और डेयरी मवेशियों में सल्फर की मात्रा ठीक होने से उनके दूध में वसा, प्रोटीन और कैसिइन की मात्रा में सुधार होता है। इन सब से मवेशियों के दांतो व हड्डियों का विकास बेहतर होता है।

(3) **कीट नियंत्रण** : सल्फर एक पिस्सू विकर्षक भी है। घर के पालतु जानवरों को पिस्सू या इन कष्टप्रद कीटों से दूर रखने के लिए सल्फर को उनके आहार में जोड़ा जाता है। पशुओं के शरीर में हानिकारक नाइट्रेट का बेअसर करने के लिए सल्फर का डिटांक्सिफाइंग गुण किसी वरदान से कम नहीं है।

(4) **सल्फर अधिकता से विशाक्ता के लक्षण** : पशुओं के सामान्य आहर में सल्फर विषाक्ता नहीं होती है। पशुओं के आहार जैसे मकई, अलफाल्फा और साइलेज में सल्फर का स्तर बहुत कम होता है। इसी के साथ पर्यावरण में प्राकृतिक रूप में पाया जाने वाला सल्फर लगभग पूरी तरह से सौम्य है। लेकिन हाइड्रोजन सल्फाइड नामक रसायन जो पशुओं के रूमेन में निर्मित होता है, साइनाइड के समान विषाक्त हो सकता है। इस रसायन के कारण मवेशी अंधे हो सकते है और साथ ही सुस्ती और खराब समन्वय प्रदर्शित होता है।

सल्फर की इस विषाक्ता की पशुओं के चारे और पानी में सल्फर के स्तर का मूल्यांकन करके रोकथाम की जा सकती है।

निष्कर्ष : उपरोक्त अध्ययन से यह साफ है कि पर्याप्त सल्फर का स्तर भेड़, मवेशी और डेयरी गायों के प्रदर्शन में सुधार करता है। सल्फर एक बहुत ही आवश्यक तत्व है जो कि पशु आहार व पानी में इसकी उचित मात्रा में सुनिश्चित हो सकता है। बहुत अधिक मात्रा में इसका प्रयोग विषाक्ता पैदा कर सकता है।

सर्दियों में मछली पालन प्रबंध

विकास फूलिया[1], यशवंत सिंह[1] एवं अंकुर जम्वाल[2]

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, एस.ए.एस. नगर (मोहाली)

[2]डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, बिहार

मछली एक ठंडे खून वाला जीव है जो कि तापमान के प्रति संवेदनशील है। मछली के शरीर का तापमान उसके आस–पास के वातावरण के अनुसार बदलता रहता है। सर्दियों के मौसम के दौरान मछली की शारीरिक गतिविधियां कम हो जाती है। जिस वजह से इसकी पोषण/खाद्य जरूरत तथा शारीरिक विकास दर भी कम हो जाती है। इसके अलावा सर्दियों के मौसम में मछली की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी कमी आती है। जिसके फलस्वरूप उन्हें बीमारियों से संक्रमित होने की संभावना बढ़ जाती है। इन कारणों से निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना जरूरी है ताकि सर्दियों के मौसम के दौरान मछली पालन में आने वाली समस्याओं से बचाव किया जा सके।

1. **पानी की गहराई** : सर्दियों के दौरान पानी की ऊपरी सतह का तापमान निचली सतह के मुकाबले काफी कम हो जाता है। जिसकी वजह से मछली तालाब के निचले हिस्से में रहना ज्यादा पसंद करती है। इसीलिए सर्दियों के दौरान मछली तालाब में पानी की गहराई कम से कम 6 फुट तक जरूर रखनी चाहिए ताकि मछलियों को कम तापमान से बचाव के लिए भरपूर जगह मिल सके।
2. **ट्यूबवैल के पानी का उपयोग** : सर्दियों के दौरान सायंकाल में सूर्य अस्त होने के उपरांत तालाब में ट्यूबवैल द्वारा ताजा पानी डालो। इस उपाय से रात्रि में पानी का तापमान ज्यादा कम नहीं होगा तथा तालाब की निचली सतह में ऑक्सीजन की मात्रा में भी बढ़ोतरी होगी।
3. **पानी की ऐरेशन** : सर्दियों के दौरान दिन छोटे होते है तथा कई–कई दिनों तक लगातार बादल भी छाए रहते हैं। ऐसे मौसम में सूर्य की रोशनी काफी हद तक कम हो जाती है और तालाब में प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में कमी होने के फलस्वरूप ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। यदि पानी में घुलनशील ऑक्सीजन की कमी का उपाय न किया जाए तो मछली की मौत भी हो सकती है और मछली पालक को काफी नुकसान उठाना पड़ सकता है। सर्दियों के दौरान तालाब में कम ऑक्सीजन का पता करने के लिए सवेरे (सूर्योदय से पहले) तालाब का निरीक्षण जरूर करना चाहिए। इस वक्त मछली का पानी से मुँह बाहर

पानी से मुँह बाहर निकाल कर साँस लेती मछली

तालाब में ऐरेशन से ऑक्सीजन बढ़ाने के तरीके

निकाल कर साँस लेना पानी में ऑक्सीजन की कमी को दर्शाता है। इस समस्या के हल के लिए इस मौसम के दौरान तालाब में सवेरे पानी की ऐरेशन का प्रबंध करना चाहिए। तालाब के पानी में घुलनशील ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ाने की प्रक्रिया को ऐरेशन कहा जाता है। ट्यूबवैल के ताजा पानी से या ऐरेटर के इस्तेमाल से पानी की ऐरेशन की जा सकती है।

4. **पी.एच. की जाँच** : पानी की पी.एच. की जाँच नियमित तौर पर करनी चाहिए क्योंकि सर्दियों के दौरान तालाब में प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में गिरावट के कारण पानी में कार्बन–डाई–ऑक्साईड (CO_2) गैंस की मात्रा बढ़ जाती है जिसके फलस्वरूप पानी की पी. एच. 7.0 से कम हो जाती है जो कि मछली पालन के लिए अनुकूल नहीं है। चूने के इस्तेमाल से इस समस्या का हल किया जा सकता है।

5. **ऊपरी खुराक दर में बदलाव** : सर्दियों के दौरान कम तापमान (20° C से नीचे) में मछलियों की खाद्य जरूरत में भारी कमी आती है। अतः सर्दी बढ़ने के साथ–साथ ऊपरी खुराक धीरे–धीरे घटा (25.75%) कर बंद कर देनी चाहिए। निरंतर बादल छाए रहने के दौरान मछली को भोजन नहीं देना चाहिए। यदि मछली पालक सर्दियों के दौरान ऊपरी खुराक दर कम नहीं करेंगे तो तालाब में अतिरिक्त खुराक इकट्ठी होने से न सिर्फ पानी की गुणवत्ता खराब होगी बल्कि मछली की सेहत पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। इसके अतिरिक्त मछली पालक को अनावश्यक खुराक से आर्थिक नुकसान भी होगा।

6. **कॉमन कार्प मछली के लिए ऊपरी खुराकी प्रबंध** : यदि तालाब में कॉमन कार्प मछली है तो सर्दियों के दौरान कम दर (50.75:) पर खुराक देते रहना चाहिए क्योंकि अन्य कार्प मछलियों के मुकाबले कॉमन कार्प मछली पर सर्दियों का कम प्रभाव पड़ता है और सर्दियों के दौरान भी इस मछली का शारीरिक विकास होता है।

7. **खाद्य का उपयोग** : सर्दियों के मौसम के दौरान तालाब में खाद्य (देसी और रसायनिक) का इस्तेमाल बंद कर देना चाहिए क्योंकि कम तापमान होने के कारण इनका सड़ना कम हो जाता है जिस कारण तालाब में काफी मात्रा में जैविक पदार्थ (गार) इकट्ठी हो जाती है। ग्रीष्म ऋतु आने पर यह जैविक पदार्थ एकदम से सड़ने लगते हैं जिसका पानी की गुणवत्ता पर हानिकारक प्रभाव होता है। इस मौसम में रसायनिक खाद्य के उपयोग से पानी में काई पैदा हो सकती है। इस समस्या से बचाव के लिए जियोलाईट का उपयोग किया जा सकता है।

8. **तालाब में काई का पनपना** : खुराक और खाद्य का जरूरी मात्रा से अधिक उपयोग करने से तालाब में अत्यधिक काई बनने की सँभावना बढ़ जाती है। ज्यादा काई ना सिर्फ पानी में सूर्य किरणों को प्रवेश करने से रोकती है बल्कि इसके अचानक मर जाने के उपरांत तालाब में इकट्ठे हुए जैविक तत्व (गार) पानी में घुलनशील ऑक्सीजन को हानिकारक रूप से प्रभावित करते हैं। अत्यधिक काई से बचने के लिए चूना (50. 100 कि.ग्रा.) या नीला थोथा (1.2 कि.ग्रा.) प्रति एकड़ के हिसाब से इस्तेमाल किया जा सकता है। पानी की पी.एच. 8.5 से अधिक होने पर काई की रोकथाम के लिए नीले थोथे का ही इस्तेमाल करना चाहिए।

तालाब में पनपी काई

9. **मछलीखोर/शिकारी पक्षियों से बचाव** : शिकारी पक्षी मछलियों को काफी नुकसान पहुँचाते हैं। इनसे बचाव के लिए तालाब के ऊपर नाईलोन की तार और चमकीले लिफाफे की पट्टियों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

10. **तालाब के आस–पास की सफाई** : तालाब के साथ–साथ उगे वृक्षों की छँटाई कर देनी चाहिए ताकि इनके पत्ते तालाब में ना गिरे और न ही वृक्षों के कारण सूर्य

मछलीखोर पक्षी

किरणों को पानी में प्रवेश करने में कोई बाधा हो। तालाब के पूर्व और पश्चिम दिशा में वृक्ष नहीं लगाने चाहिए। समय–समय पर तालाब में गिरे हुए पत्तों को निकाल देना चाहिए और तालाब में इकट्ठी हुई गार को कंटीली तार की मदद से निकाल देनी चाहिए।

11. **सर्दियों के दौरान मछली का सेहत प्रबंध :** सर्दियों के मौसम के दौरान तनाव भरपूर वातावरण में मछली की बीमारियों के प्रति संवेदनशीलता बढ़ने से कई तरह की बीमारियों का संक्रमण हो सकता है। मछली को इन बीमारियों से बचाव और तालाब को रोगाणु रहित रखने के लिए नवंबर से जनवरी महीने के दौरान निम्नलिखित उपाय करने चाहिए।

- तालाब में सीफैक्स दवाई की एक किश्त 400 मि. ली. प्रति एकड़ के हिसाब से डालो।
- तालाब को रोगाणु रहित रखने के लिए लाल दवाई (1–2 कि.ग्रा. प्रति एकड़) या चूना (50–100 कि. ग्रा. प्रति एकड़)।
- मछलियों को परजीवियों के संक्रमण से बचाने के लिए नमक (100 कि.ग्रा. प्रति एकड़) का उपयोग करो।
- मछली को जूँ (आरगुलस) लग जाने की स्थिति में 15–20 मि.ली. प्रति एकड़ बूटोक्स दवाई का इस्तेमाल करो।

उपरोक्त लिखित बातों का ध्यान रखकर मछली पालक न केवल मछलियों को बीमारियों से बचा सकते हैं बल्कि मछली की पैदावार को बढ़ाकर अधिक मुनाफा भी कमा सकते हैं।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

भैंसों में प्रजनन सम्बंधित तकनीकियां

ऋषिपाल[1], पूजा यादव[2] एवं रवि दत्त[1]

[1]मादा पशु एंव प्रसूति रोग विभाग, [2]पशु शल्यचिकित्सा एवं रेडियोलोजी विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

भैंसों का भारतीय अर्थव्यवस्था में बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। छोटे किसान अपनी आजीविका के लिये मुख्यतौर पर पशुपालन पर निर्भर हैं। भैंस का दुग्ध उत्पादन देशी गाय से बेहतर है तथा भैंस के दूध में वसा की मात्रा भी ज्यादा होती है। इसलिये किसान गाय के मुकाबले भैंस को पालना ज्यादा पसंद करते हैं। हरियाणा मुर्राह नस्ल की भैंस के लिये पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। भैंस के महत्व को देखते हुए उनके प्रजनन में होने वाली समस्याओं की तरफ ध्यान देना अति आवश्यक है।

भैंस की प्रजनन क्षमता में गिरावट एक गंभीर चिंता का विषय है और इसके सुधार की तरफ ध्यान देने की जरूरत है। भैंसों में प्रजनन कई निहित समस्याओं जैसे देरी परिपक्वता, मूक गर्मी तथा खास तौर पर ग्रीष्मकाल में ब्याने के बाद लम्बे समय तक गर्मी में न आना व कम गर्भाधान दर आदि से ग्रस्त है। भैंस के गर्भाधान में देरी सीधे तौर पर पशुपालक की आय को प्रभावित करती है। ऊष्ण कटिबंधीय वातावरण (भारतीय हालात) प्रजनन प्रदर्शन और प्रजनन क्षमता साल में समय के साथ विशिष्ट प्रभाव दिखाता है। इसलिये पशु के प्रजनन क्रिया विज्ञान की बुनियादी विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए कृत्रिम जैव प्रौद्योगिकी की तकनीकों के मानकीकरण की प्रक्रिया में विकसित करने की आवश्यकता है। इनकी सहायता से पशुओं की प्रजनन क्षमता को काफी हद तक बढ़ाया जा सकता है। ये प्रजनन तकनीक निम्न प्रकार से है–

1. सुपर ओवुलेसन तकनीक तथा भ्रूण प्रत्यारोपन तकनीक (एंब्रियो ट्रांस्फर टेक्नोलॉजी अर्थात् ई.टी.टी.)
2. कृत्रिम परिवेशी निषेचन (इन विट्रो फ्रटीलाइजेशन अर्थात् आई.वी.एफ.)
3. भ्रूण का शीत भंडारण (एंब्रियो फ्रीजिंग)
4. भ्रूण के लिंग को सुनिश्चित करना (सेक्स डिटरमिनेशन ऑफ एंब्रियो)

1. सुपर ओवुलेसन तकनीक भ्रूण प्रत्यारोपन तकनीक (एंब्रियो ट्रांस्फर टेक्नोलॉजी अर्थात् ई.टी.टी.)

सामान्य पशु के एक मादा चक्र में डिम्ब ग्रन्थियों से एक डिम्ब रिहा होता है लेकिन इस तकनीक के द्वारा उत्तम गुणों वाली गाय को हार्मोन के द्वारा उत्तेजित करके एक मादा के चक्र में एक से ज्यादा डिम्ब रिहा करा दिये जाते हैं। यह प्रक्रिया पशु में उत्तम, नस्ल, जलवायु, खान–पान, दुग्ध उत्पादन सुपर ओवुलेसन करवाने वाली दवा और मादा चक्र का चरण आदि से प्रभावित होती है। पुटक उत्तेजक हार्मोन (फोलिकल स्टुमुलेटिंग हार्मोन/एफ.एस.एच.) पी. एम.एस.जी. हार्मोंस से अच्छी दवा है। भैंस की डिम्ब ग्रन्थियों में अविकसित पुटकों की संख्या गाय के मुकाबले कम होती है। अविकसित पुटक ही विकसित होने के बाद डिम्ब (अण्डा) रिहा करता है। इसलिये यह तकनीक गायों में ज्यादा कामयाब है।

भ्रूण प्रत्यारोपन तकनीक में किसी उत्तम मादा पशु जिसे मादा (डोनर) कहा जाता है, से भ्रूण एकत्रित करके उसे उसी वंश की किसी दूसरी मादा पशु जिसे प्राप्तकर्ता (रेसिपियन्ट) बोलते हैं के गर्भाशय में प्रत्यारोपित किया जाता है। इस तकनीक में उत्तम गुणों वाली मादा से सुपर ओवुलेसन की तकनीक का प्रयोग करके एक से ज्यादा डिम्ब रिहा करा दिये जाते हैं तथा डोनर मादा पशु के गर्मी में आने के उपरान्त उसका उत्तम सांड के शुक्राणुओं से कृत्रिम गर्भाधान कर दिया जाता है। कृत्रिम गर्भाधान के छः से सात दिन बाद डोनर मादा पशु के गर्भ से भ्रूणों को एकत्रित किया जाता है। हार्मोन की सहायता से प्राप्तकर्ता मादाओं का मादा चक्र भी इस तरह से नियंत्रित कर लिया जाता है। जिससे वो मादा डोनर से 12 से 24 घंटे पहले गरमी में आ जाये। भ्रूण की डोनर मादा पशु के गर्भ से निकालने के बाद गुणवत्ता जांची जाती है। वह भ्रूण जो तय मानकों में खरे उतरते हैं, उन्हें ही प्राप्तकर्ता मादाओं में भ्रूण

परखनली के माध्यम से उनके गर्भाशय में प्रत्यारोपित कर दिया जाता है। प्राप्तकर्ता मादाओं के गर्भ में ही से भ्रूण अपना गर्भकाल पूरा करते हैं।

लाभ

1. उच्चतम भ्रूणों वाली मादा से पर्याप्त लाभ को उठाने के लिये यह तकनीक सहायक है।
2. प्राकृतिक प्रजनन से फैलने वाली बिमारियों से भी बचा जा सकता है।
3. एक उच्चतम गुणों वाली मादा से भ्रूण एकत्रित कर तथा प्राप्तकर्ता मादाओं में भ्रूण प्रत्यारोपण कर एक से ज्यादा बच्चे पैदा किये जा सकते हैं।
4. भ्रूण प्रत्यारोपन से पहले लिंग निश्चित करके ज्यादा से ज्यादा मादा बच्चों को पैदा किया जा सकता है।
5. एकत्रित भ्रूणों को तरल नाइट्रोजन में संरक्षित किया जा सकता है, तथा जरुरत पड़ने पर प्रत्यारोपित किया जा सकता है।
6. उन संरक्षित भ्रूणों को दूर दराज इलाकों और दूसरे देशों में भी आसानी से भेजा जा सकता है, जिसमें उच्चतम गुणों वाली मादा पशु से लाभ उठाया जा सकता है।

कमियां

1. भैंस ग्रीष्म ऋतु में मुख्य तौर पर अप्रैल से जून में यौन प्रक्रिया लगभग निष्क्रिय होती है। ग्रीष्म ऋतु में इस पशु में प्रोलेक्टिन हार्मोन ज्यादा मात्रा में बनता है। इसके कारण पुटक की परिपक्वत्ता प्रभावित होती है तथा डिम्ब (अण्डा) रिहा नहीं हो पाता। इस समय में तकनीक कामयाब नहीं है।
2. यह तकनीक महंगी है।
3. भ्रूण संकलित करने तथा प्रत्यारोपन के दौरान भ्रूण की मृत्यु भी हो सकती है।

2. कृत्रिम परिवेशी निषेचन (इन विट्रो फ्रटीलाइजेसन अर्थात् आई.वी.एफ.)

इस प्रक्रिया में शुक्राणुओं तथा अंडों का निषेचन कृत्रिम परिवेश से करवाया जाता है। डोनर मादा पशु के योनि मार्ग से डिम्ब (अण्डा) को प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में एक अल्ट्रासांउड चलित सुई योनि की दीवार को भेद कर डिम्ब ग्रन्थियों तक पहुंचती है, इस सुई के द्वारा पुटकों का चूसण किया जाता है। ताकि पुटकीय द्रव प्राप्त किया जा सके। इस पुटकीय द्रव्य को प्रयोगशाला में ले जाकर अंडाणुओं को एकत्रित (संकलित) किया जा सकता है। यदि संकलित अंडाणु परिपक्व नहीं होते हैं तो इन्हें परिपक्व करने के लिये एक पौष्टिक माध्यम में रखा जाता है। परिपक्व होने के बाद अंडाणुओं का शुक्राणु के निषेचन किया जाता है। निषेचित अंडों को सात दिनों तक अंडा सेने की मशीन में रखा जाता है। इसी दौरान, वृद्धि स्तर के अनुकूल माध्यम में नियमित रुप से बदलाव होता है। उसके बाद परंपरागत भ्रूण प्रत्यारोपन की तकनीक की भाँति प्राप्तकर्ता गाय के गर्भाशय में भ्रूण को प्रत्यारोपित किया जाता है।

लाभ

1. इस तकनीक से कृत्रिम गर्भाशय या प्राकृतिक सम्भोग की तुलना में बहुत कम शुक्राणुओं की आवश्यकता होती है। जब कोई उत्तम गुणों वाला नर पशु कम शुक्राणु बना पाता है तो इस तकनीक के माध्यम से उस पशु से बच्चे प्राप्त किये जा सकते हैं।
2. अगर किसी उत्तम गुणों वाली मादा पशु की अण्डावाही नलियाँ किसी कारणवश बंद हो जाती है तो उसके डिम्ब को एकत्रित (संकलित) करके कृत्रिम परिवेश में निषेचन करवाकर बच्चे प्राप्त किये जा सकते हैं।
3. उत्तम गुणों वाली मादा पशु जो किसी बिमारी या चोट की वजह से बच्चा देने में असमर्थ है, लेकिन पशुओं की डिम्ब ग्रंथियाँ सही काम कर रही है, तो इस तकनीक के माध्यम से उन मादा पशुओं से भी बच्चे प्राप्त कर सकते हैं।

कमियाँ

1. यह तकनीक अत्यधिक महंगी है।
2. भ्रूण के छेड़छाड़ के कारण नवजात बछड़ों में अनुवांशिक (जन्म–जात) बीमारियाँ हो सकती हैं।
3. प्राप्तकर्ता मादा में भ्रूण रोपन के योग्य हार्मोन संतुलित होना अति आवश्यक है, अन्यथा गर्भपात हो सकता है।

3 शीत भंडारित भ्रूण (एम्ब्रायो फ्रीजिंग)

संकलित भ्रूणों को तरल नाइट्रोजन (–196ह सी) में संरक्षित किया जा सकता है। आवश्यकता पड़ने पर विगलन करके इन्हें प्राप्तकर्ता मादाओं में प्रत्यारोपित किया जा सकता है। यह तकनीक भ्रूण प्रत्यारोपण की तकनीक को और अधिक प्रभावशाली बनाती है।

लाभ

1. भैंसों में इस तकनीक का बहुत फायदा है क्योंकि भैंस ग्रीष्म काल में कम गर्मी में आती है तथा इस दौरान भ्रूण प्रत्यारोपण नहीं किया जा सकता। संकलित भ्रूण को ठण्ड में संरक्षित करके उपयुक्त समय आने पर प्रत्यारोपण किया जा सकता है।
2. इस तकनीक से उत्तम गुणों वाली मादा पशु के भ्रूण को दूसरे देशों में ले जाया जा सकता है तथा विश्व के दूसरे देशों में भी उच्च नस्ल के पशु पैदा किये जा सकते हैं।

कमियां

1. तापमान में ज्यादा बदलाव होने से भ्रूण की मृत्यु हो सकती है।
2. नवजात बछडों के अनुवांशिक (जन्म–जात) बीमारियाँ हो सकती हैं।

4. भ्रूण लिंग की जांच

भ्रूण के लिंग का पता लगाने वाली कई तकनीक हैं। इनमें से प्रमुख हैं X- क्रोमोसोम से सम्बंधित एनजाईम (किण्वक), गतिविधि H-Y प्रतिजन को पता लगाने वाली एंटीबोडीज तथा Y- क्रोमोसोम सम्बंधित डी.एन.ए. जाँच।

लाभ

1. यह तकनीक ज्यादा से ज्यादा बच्चे पैदा करके किसान की आय तथा देश का दुग्ध उत्पादन बढ़ाने में सहायक है।
2. मादा लिंग का गर्भ में होने पर पशु की कीमत बढ़ जाती है।

कमियां

1. यह तकनीक कम सटीकता और समय लेने वाली है।

भविष्य की संभावनायें

पिछले दो दशकों में, एशिया महाद्वीप के कुछ विकसित देशों ने भ्रूण जैव प्रौद्योगिकी प्रयोगशालाओं में बहुत निवेश किया है। ताकि उन्हें कुशल जनशक्ति मिल सके जो उनकी भैंस का आनुवांशिक गुणों में सुधार करने में सहायक सिद्ध हो। भ्रूण प्रत्यारोपण की तकनीक को आनुवांशिक सुधार के लिये प्रयोग में लाया जा सकता है। कई उत्साहजनक परिणामों के बावजूद, इन तकनीकों को पूरी तरह कामयाब बनाने के लिये अधिक अध्ययन और शोध की आवश्यकता है।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

अंडों के संरक्षण के उपाय

सुरेंद्र कुमार, रीतू रानी एवं संजय यादव

पशुजन्य उत्पाद प्रद्यौगिकी विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

1. **बांझ अंडों का उत्पादन :**

उपजाऊ अंडे बाँझ अंडों की अपेक्षा अधिक तापमान पर शीघ्र होते हैं। अतः यदि अंडों का उत्पादन किया जाये तो अंडों की गुणवत्ता काफी समय तक बनी रह सकती है। बाँझ अंडों को प्राप्त करनेके लिए प्रजनन काल में मुर्गों को मुर्गियों से अलग रखना चाहिए। आम धारणा कि मुर्गियों द्वारा अंडे दिये जाने के लिए एक मुर्गा का होना आवश्यक है जबकि वास्तव में सच्चाई यह है कि मुर्गियाँ नर की उपस्थिति के बिना भी अंडे दे सकती हैं और इस प्रकार प्राप्त अंडें बाँझ होते हैं। किन्तु गाँवों में ऐसा करना सम्भव नहीं हैं। अतः ऐसी अवस्था में अंडों का विनिषेचन करने कि सलाह दी जाती है।

2. **विनिषेचन :**

विनिषेचन हेतु अंडों के जीवाणु नष्ट करने के लिए 15 मिनट तक 135° F से 145° F ताप के गर्म पानी में रखा जाता है। विनिषेचित अंडा भी बाँझ अंडे की ही तरह होता है तथा इसे बिना खराब हुए काफी समय तक रखा जा सकता है। विनिषेचित किये जाने वाले अंडों को एक साधारण तारों वाली टोकरी में रखकर उसे 15 मिनट तक गर्म पानी में डुबोया जाता है इसके बाद इन्हें किसी ठंडे स्थान पर भंडारित किया जाता है। एक सुव्यवस्थित मुर्गी पालन फार्म में विनिषेचन के लिए विनिषेचन संयंत्र लगाये जाते हैं, जिसमें पानी के टैंक होते हैं जिनमें यांत्रिक विलोडक, विद्युत तापन व्यवस्था होती है तथा तार की टोकरी व अंडों के कूलर होते हैं।

3. **अंडों का शीतलन :**

68° F से ऊँचा तापमान अंडे में भ्रूण के परिवर्धन के लिए उचित होता है तथा इसी कारण यह तेजी से अंडे को खराब करता है। 68° F से कम तापमान अंडे की गुणवत्ता व ताजगी बनाये रखने में सहायक होता है। सर्दियों के मौसम में ठंडा करने की किसी विधि की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि साधारणतया तापमान 68° F से नीचे ही रहता है।

ठंडा करने वाली विधियाँ जो मुर्गी पालकों द्वारा प्रयोग में लायी जा सकती है :

- ❖ **शीत कक्ष :** अंडे रखे जाने वाले कमरों के सभी दरवाजों व खिड़कियों पर खस की चटाइयाँ लगाकर व उन पर लगातार पानी छिड़ककर कमरे को ठंडा रखा जा सकता है। अगर संभव हो तो कमरे में बिजली का पंखा लगाया जा सकता है, जो कमरे को ठंडा रखता है।
- ❖ **भूमिगत तहखाना :** यदि ठंडे कमरे की व्यवस्था न हो तो भूमिगत गड्ढा तैयार किया जा सकता है, जो अंडों के प्रशीतन के लिए उचित कम तापमान बनाये रखता है।
- ❖ **मिट्टी के घड़े :** मिट्टी के एक बड़े घड़े को आधा बालू में दबाकर उस पर पानी छिड़कते रहने से उसमें उचित तापमान बनाये रखा जा सकता है। इसकी तली में नमी से बचने के लिए सूखी घास या भूसा बिछा देना चाहिए। घड़े को हवादार स्थान पर रखना चाहिए तथा घड़े का मुँह पतले मलमल के टुकड़े से बांधना चाहिए, जिससे हवा व नमी घड़े में आसानी से आ जा सके।

4. **शीत संग्रहण :**

शीत संग्रहण द्वारा 0° F तथा 85 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर अंडों की गुणवत्ता को लगभग नौ महीने तक सुरक्षित रखा जा सकता है। भारत में सुव्यवस्थित मुर्गी पालन फार्मों में शीत गृहों का प्रयोग होने लगा है किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ प्रशीतन की सुविधा उपलब्ध नहीं है, अंडों को बहुत अधिक दिनों तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता।

5. **अंडों को जमाना :**

अंडों को गुणवत्ता को सुरक्षित रखने का यह सबसे अच्छा उपाय है। इस विधि में खराब होने की प्रक्रिया रूक

जाती है तथा जमाये हुए अंडे शीतगृह में अनिश्चित काल के लिए रखे जा सकते हैं। इस विधि में अंडों को कवच सहित शीतगृह में रखा जाता है। उचित अवस्था तक ठंडे करने के पश्चात् अंडों को कैंडलिग कक्ष में रखा जाता है। कैंडिल जांच के पश्चात् अंडों को विच्छेदन टेबल पर पहुँचाया जाता है जहाँ इन्हें एक कुंद चाकू की सहायता से तोड़ा जाता है। विच्छेदन टेबल के नीचे कटोरे लगे रहते हैं जिनमें अंडे के सभी पदार्थ एकत्र होते रहते हैं। पीतक तथा सफेदी को अलग–अलग या पीतक व सफेदी को एक साथ जमा लिया जाता है जिससे जीवाणुओं की वृद्धि नहीं होती तथा अंडे सुरक्षित हो जाते हैं। जमाये हुए अंडों का प्रयोग केक, पेस्ट्री, आइसक्रीम आदि बनाने के लिए किया जाता है।

6. **अंडों को सुखाना :**

अंडों को सुखाना इन्हें जमाने से अधिक आसान है। सुखाने से अंडों के प्रारम्भिक भार में लगभग एक चौथाई की कमी हो जाती है और इस प्रकार 70 सामान्य आकार के अंडों से 1 कि.ग्रा. सूखा अंडा उत्पाद बनता है। अंडों के सूखे उत्पाद जैसे सूख हुआ सारा अंडा, सूखा पीतक तथा सूखी सफेदी फार्मों में तैयार किये जा सकते हैं इस विधि में अंडे के गूदे को दाब से एक शुष्कन कोष्ठ से गुजारते हैं तथा एक तुंड से इसे फुहार के रूप में निकालते हैं। भीतर आने वाली वायु का तापमान अधिक रखा जाता है जबकि बाहर निकालने वाली वायु का तापमान कम रहता है। स्प्रे द्वारा सुखाया गया अंडा एक बारीक चूर्ण के रूप में रहता है जबकि पतीले में सुखाया गया अंडा शल्कों के रूप में रहता है, जिसे कूट कर चूर्ण बनाया जाता हैं।

7. **अंडों को चूने से बंद करना :**

अंडों को चूने से बंद कर देने से उनकी नमी नहीं उड़ती तथा कवच के छिद्रों द्वारा कार्बन–डाइ–ऑक्साइड भी नहीं निकलती। चूने से बंद करने के लिए अंडों को चूने के घोल में 18 घंटे तक डुबोकर रखा जाता है।

8. **अंडों का तेल विलेपन :**

सामान्य मुर्गी पालकों के लिए अंडों की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए उन पर तेल का लेप करना सबसे आसान व सस्ता तरीका है। इस कार्य के लिए कार्नेशन तेल तथा नारियल का तेल प्रयोग किया जाता है। यह तेल रंगहीन, स्वादहीन तथा गंधहीन होना चाहिए। अंडों को एक तार की जाली वाली टोकरी में रखकर लेप करने वाले तेल से भरे बर्तन में 5 से 10 सेकण्ड के लिए डुबोते हैं। इसके पश्चात अंडों से भरी टोकरी को बाहर निकाल कर लगभग एक घंटे के लिए हैंगर से टाँग देते हैं। बर्तन के लेप वाले तेल को ठीक प्रकार से छान कर व जीवाणु रहित करके कई बार प्रयोग किया जा सकता है। तेल व लेप वाले अंडे सामान्य कमरे के तापमान (25–278° C) पर 30 दिन तक रखे जा सकते हैं तथा 13° C पर इन्हें 80 दिन तक रखा जा सकता है। मुर्गी द्वारा अंडे दिये जाने के बाद जितनी जल्दी हो सके इन पर तेल का लेप कर देना चाहिए।

9. **जल काचित विधि :**

अंडों की गुणवत्ता को बनाये रखने का यह एक अच्छा उपाय है। इसके लिए सोडियम सीलिकेट को उबालकर ठंडे किये गये पानी में एक निश्चित अनुपात के अनुसार मिलाया जाता है। इन्हें एक मिट्टी के बर्तन में रखकर आपस में ठीक प्रकार मिलाते हैं व अंडों को इस घोल में डुबोकर बर्तन को ढक कर ठंडे स्थान पर रख देते हैं।

जलवायु परिवर्तन का पशुधन पर प्रभाव तथा उसको कम करने की रणनीतियाँ

संदीप, दीपक चोपड़ा एवं दिपिन चंद्र यादव

पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या का रूप धारण कर चुका है। जलवायु परिवर्तन से दुनिया को आने वाले समय में कई खतरों से रूबरू होना पड़ सकता है। जलवायु परिवर्तन पृथ्वी के मौसम तथा जलवायु में परिवर्तन औसतन तापमान का बढ़ने को दर्शाता है। जलवायु परिवर्तन दशकों या उस से ज्यादा समय तक रहता है। जलवायु परिवर्तन मुख्य रूप से ग्रीन हाऊस गैंस के उत्सर्जन से होता है। जिसके परिणामस्वरूप वातावरण में बदलाव आता है। इन गैसों को मुख्य स्त्रोत उद्योग, वानिकी, कृषि, पशुपालन, परिवहन है।

जलवायु परिवर्तन से पृथ्वी के तापमान में औसत वृद्धि, ध्रुवीय बर्फ का पिघलना, प्रवासी पक्षिओं का स्थान बदलना, ग्लेशियर का पिघलना, खेती की उत्पादकता में कमी, पशुओं की उत्पादन क्षमता पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव–

- पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रभाव।
- पशुओं के प्रजनन क्षमता पर प्रभाव।
- पशुओं के चारा प्रबंधन में समस्याएँ।
- पशु उत्पाद की गुणवत्ता पर प्रभाव।
- बीमारियों का बढ़ता प्रकोप।
- **चारे की उपलब्धता–** जलवायु परिवर्तन से फीड तथा फोडर की उपलब्धता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। फसल चक्र को सबसे ज्यादा प्रभावित जलवायु परिवर्तन करता है। जिसके परिणामस्वरूप कम चारा उत्पादन, गुणवत्ता में कमी आदि प्रभाव होते हैं।
- **पशु की खुराक पर प्रभाव–** पशुओं में 10–35 प्रतिशत तक खुराक में कमी हो जाती है।
- **दूध उत्पादन में कमी–** जलवायु परिवर्तन से मुख्य रूप से दूध उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। पशु गर्मी से बचने के लिए अपनी शारीरिक ऊर्जा का उपयोग करता है जिससे दूध का उत्पादन उच्चतम

स्तर तक नहीं पहुँच पाता है।
- पशुओं की गर्मी में आने की प्रक्रिया बहुत ज्यादा प्रभावित होती है।

पशुधन उत्पादन को जलवायु परिवर्तन से बचाने की रणनीतियाँ–

1. **चारागाह प्रबंधन :** चराई की उन्नत किस्मों की बुवाई, अधिक उपज वाली किस्मों का उपयोग, आसानी से पचने वाले फोडर का इस्तेमाल करना। अच्छी गुणवत्ता के बीज का उपयोग।
2. **पशु प्रजनन :** उत्पादकता बढ़ाने के लिए चयन करने से मीथेन उत्सर्जन तीव्रता कम होगी। अच्छी नस्ल के पशुओं की उत्पादकता ज्यादा है। जिसके परिणाम स्वरूप मीथेन की उत्सर्जन कम होगी।
3. **कचरा प्रबंधन :** पशु आहर में सुधार, उचित गोबर एवं खाद प्रबंधन करके मीथेन की उत्सर्जन क्षमता को कम किया जा सकता है।
4. तेल और तिलहन, फलियों का उपयोग, साईलेज, मक्की के प्रयोग से मीथेन का उत्सर्जन कम किया जा सकता है।
5. कापर सल्फेट, एसिड, रसायन, ट्राईजीन, लिपिड, टैनिना, आयनोफोस पदार्थों को फीड में मिलकर खिलाने से मिथेन उत्सर्जन कम हो सकती है।
6. मिथेन गैंस को बनाने वाले बैक्टीरिया को वैक्सीन की मदद से कम किया जा सकता है।

कृषि एवं पशुधन उत्पादन के प्रभावी तरीके–आय वृद्धि के विकल्प

संदीप, दीपक चोपड़ा एवं दिपिन चन्द्र यादव

पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

किसी देश की एवं विकास किसानों के कल्याण पर निर्भर करती है। वैश्विक स्तर पर किसानों की स्थिति अच्छी नहीं है। जिसके परिणामस्वरूप भूखमरी, आत्महत्या जैसे अभिशाप दुनिया के लिए आज भी एक चुनौती है। किसान विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसान सबसे ज्यादा परिश्रम करते हैं। लेकिन उनकी आय उनके परिश्रम से कई गुणा कम है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि तथा पशुपालन भारत की कुल जीडीपी में सबसे ज्यादा योगदान देता है। पशुपालन में डेयरी, पोल्ट्री और मत्स्य पालन तथा मधुमक्खी पालन मुख्य रूप से सकल घरेलू उत्पाद में सबसे ज्यादा योगदान करते हैं। गांव की अर्थव्यवस्था में इन क्षेत्रों से बड़ी संख्या में युवाओं को रोजगार मिलता है। कृषि तथा पशुपालन में बहुत सारी चुनौतियाँ है। जिसमें जलवायु परिवर्तन, बाढ़, अधिक गुणवत्ता वाले बीज एवं उर्वरक की कमी, फीड की कमी, अच्छी गुणवत्ता के पशु की कमी, अच्छे गुणवत्ता के चारे की कमी, ज्यादा तापमान से पशुओं के उत्पादन पर प्रभाव पड़ना, हरे चारे की कमी आदि समस्या है।

आय बढ़ाने की प्रभावी तरीके–

1. लागत में कमी लाना और आय में वृद्धि करना।
2. उत्पादन में वृद्धि।
3. फसलों का उचित मूल्य निर्धारण।
4. विविध कृषि।
5. कृषि उत्पादन में सुधार– कृषि उत्पादन को सिंचाई और तकनीकी प्रगति के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है।
6. फसलों की तीव्रता में वृद्धि– मुख्य खरीफ और रबी मौसम के बाद कम अवधि की फसलों को उगाकर, ज्यादा आय कमाना।
7. विविध करण–

❖ फलों, सब्जियों, फाइबर, मसालों और फलों जैसी फसलों का उगाना।

❖ अन्य उद्यमों जैसे डेयरी, पोल्ट्री, सुअर पालन, मछली पालन के साथ जोड़ना।

❖ कृषि से गैर कृषि व्यवसायों में किसानों को जोड़ना।

❖ कृषि उत्पादों का व्यवसाय।

❖ फसल और आय हानि पर बीमा प्रदान करना।

❖ प्राइवेट व्यवसाय प्रतिष्ठानों को खेती में निवेश के लिए प्रोत्साहित करना।

❖ नदियों को जोड़ना– बहुत सी नदियों को जोड़ के उन इलाके में पानी पहुँचाना जहाँ पानी की कमी है।

❖ टमाटर, प्याज और आलू जैसे खराब होने वाली वस्तुओं की मूल्य अस्थिरता को दूर करना।

❖ कपास उत्पादकों को प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण के माध्यम से प्रति हेक्टेयर में वृद्धि करना।

❖ देश को गुणवत्तापूर्ण बीज, उर्वरक और बिजली की उपलब्धता कराना।

❖ सिंचाई के क्षेत्र का विस्तार करना।

❖ लोगों को परंपरागत खेती से आधुनिक खेती को बढ़ावा देना।

❖ फलों, फूलों, सब्जियों, सिल्कवर्म की खेती के लिए प्रोत्साहित करना।

❖ पानी की कमी वाले इलाकों में ड्रिप सिंचाई विधि को प्रोत्साहन।

❖ बिचौलियों को खत्म करना।

❖ खेती के उत्पादों का मार्केट बनाना।

❖ मंडियों में किसानों के उत्पाद बेचने के लिए प्रेरित करना।

पशुधन की भूमिका :

1. पशुओं की गुणवत्ता में सुधार करना।
2. बेहतर चारा प्रबंधन।
3. कृत्रिम गर्भाधान को बढ़ावा देना।
4. बछड़े के अंतराल में कमी लाना।
5. कम उम्र में अच्छी वृद्धि वाले पशुओं का उपयोग।
6. संतुलित आहार का उपयोग।
7. पशुओं का आवास वैज्ञानिक पद्धति पर करना।
8. पशुओं को खतरनाक बीमारी के टीके लगवाना।
9. पशुओं का बेहतर प्रबंधन करना।
10. गर्मी तथा सर्दी से बचाव के लिए उपाय करना।
11. विभिन्न उद्यमों जैसे डेयरी, पोल्ट्री, सुअर पालन, मधुमक्खी पालन, सेटीकल्चर, मत्स्य पालन, बकरी पालन को साथ अपनाकर आय बढ़ाई जा सकती है।

एन्टेरोटॉक्सीमिया (इ.टी.): भेड़ व बकरियों में एक जानलेवा रोग

आनंद प्रकाश, पल्लवी मोदगिल एवं नरेश जिंदल

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

एन्टेरोटॉक्सीमिया रोग भेड़ और बकरियों के सभी आयु वर्ग को प्रभावित करता है और उनमें अचानक मृत्यु का मुख्य कारण है। इस रोग से ग्रस्त पशु प्रायः कोई लक्षण प्रकट नहीं करता है और इस रोग के कारण पशुओं में मृत्यु दर 100 प्रतिशत तक जा सकती है।

रोग के कारण एवं प्रसारण :

इस रोग का कारण जीवाणु क्लॉस्ट्रीडियम पेरफरिनजेंस प्रकार डी है जो कि स्वस्थ पशु की आँतों में पाया जाता है। अंत में जीवाणुओं का संतुलन बिगड़ने के कारण इस जीवाणु की संख्या में वृद्धि हो जाती है। आंत के असंतुलन के कारण यह जीवाणु पनपता है और एप्सिलोन नामक जहर बना देता है। यह जहर मुख्यतः पशु की दिमाग की रक्त नलियों को प्रभावित करता है, जिसके कारण स्वस्थ से दिखने वाले पशु की अचानक मृत्यु हो जाती है।

आंत में जीवाणुओं के असंतुलन के प्रमुख कारण :

- आवश्यकता से अधिक मात्रा में चारा खाना
- ज्यादा मात्रा में कार्बोहाइड्रेट प्रचुर खाना खाना
- ज्यादा मात्रा में हरा चारा खाना
- पशु के खाने में अचानक परिवर्तन होना

रोग के लक्षण :

- अचानक मृत्यु
- बेचैनी व छटपटाहट
- पेट में दर्द व अफारा आना
- बार–बार उठाना बैठना
- असमन्वयः
- आक्षेप (दौरा पड़ना)
- दस्त लगना।

रोग की पहचान व निदान :

- पशुओं में अचानक मृत्यु और उपरोक्त रोग के लक्षण दिखाई देते हैं तो इ.टी. की संभावना बढ़ जाती है।
- शव परिक्षण के दौरान बड़े पेट व चौथे पेट में अत्यधिक खाना मिलना।
- गुर्दे का पिलपिलापन
- गुर्दे प्रभावित होने से मूत्र में सर्करा (शुगर) की मात्रा बढ़ जाती है। अतः मूत्र में सर्करा की जांच करवानी चाहिए।
- आंत के स्लाइड परीक्षण में छोटी व मोटी ग्राम पॉजिटिव रोड क्लॉस्ट्रीडियम का मिलना।
- एप्सिलोन जहर की जांच के लिए आंत के तरल पदार्थ का चूहों में परीक्षण।
- पी.सी.आर. विधि द्वारा क्लॉस्ट्रीडियम परफरीनजेंस व प्रकार डी की जीन का परीक्षण।
- लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा व पशु विज्ञान विश्वविद्यालय के वेटरनरी पब्लिक हेल्थ व एपिडेमियोलॉजी विभाग से इस बीमारी की जांच के लिए भेड़ और बकरी पालक संपर्क कर सकते हैं। इस विभाग में इस बीमारी की जांच के लिए सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

रोग की रोकथाम व उपचार :

- अगर इस रोग की आशंका है तो ऐंटीबायोटिक चिकित्सा करने से कुछ सफलता मिल सकती है, परन्तु पशु के शरीर में जहर बनने के उपरांत इसका बचाव मुश्किल है।
- अफरा रोकने के लिए ब्लॉटरिड़ या ब्लॉटॉसिल जैसे दवाएं दी जा सकती है।
- रोग के लक्षण आने पर योग्य पशुचिकित्सक से परामर्श कर रोग का निदान करवाएं।

रोग से बचाव :

पशुपालकों को चाहिए कि पशु की आंत में जीवाणुओं के असंतुलन होने से बचाये। रोग से बचाव के लिए पशुओं में रोग के बचाव के टीके लगवाएं। दो टीके दो हफ्ते के अंतराल पर पशु में लगवाएं और इसके बाद प्रतिवर्ष यह टीके पुनः लगवाएं। रोग के बचाव के टीके हरियाणा पशु टीका संस्थान, हिसार में उपलब्ध हैं। इस टीके के लिए भेड़ व बकरी पालक अपने नजदीकी पशु हस्पताल से संपर्क कर सकते हैं।

प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता

सज्जन सिंह[1] एवं दलजीत सिंह[2]
विस्तार शिक्षा निदेशालय[1], पशु प्रजनन विभाग[2]
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

हरियाणा में एक साल में दूध उत्पादन 9.35 प्रतिशत बढ़ गया है। यहां 1 अप्रैल 2018 से 31 मार्च 2019 तक 107 लाख टन दूध का उत्पादन हुआ है। 2017–18 में यह 97.84 लाख टन रहा था। ऐसे में 9.16 लाख टन दूध बढ़ने से रोजाना प्रति व्यक्ति उपलब्धता औसतन 1 किलो 87 ग्राम (1.087 किलोग्राम) हो गई है। पिछले साल यह 1.05 कि.ग्रा. थी। प्रति व्यक्ति दूध उपलब्धता में पंजाब के बाद हरियाणा का देश में दूसरा स्थान है। पंजाब में प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता एक साल में सिर्फ 12 ग्राम बढ़कर रोजाना 1 किलो 132 ग्राम पहुंची है। (1.132 कि.ग्रा.) वहीं, देश में यह औसतन 375 ग्राम है। पंजाब में कुल दूध उत्पादन 111 से बढ़कर 118 लाख टन हुआ है। यानी इसमें 6.30 फीसदी की बढ़ोतरी हुई है। यह हरियाणा से 3.05 प्रतिशत कम है अगर दूध उत्पादन इसी तेजी से बढ़ता है तो 2020 तक हरियाणा प्रति व्यक्ति दूध उपलब्धता में पहले स्थान पर पहुंच सकता है।

दूध उत्पादन में देश में हरियाणा का 8वां स्थान है व दूध उत्पादन में हरियाणा की 5.6 प्रतिशत हिस्सेदारी है।

उत्तर प्रदेश	16 प्रतिशत
राजस्थान	12.7 प्रतिशत
मध्यप्रदेश	8.34 प्रतिशत
आंध्रप्रदेश	7.4 प्रतिशत
गुजरात	7.7 प्रतिशत
पंजाब	6.7 प्रतिशत
महाराष्ट्र	6.3 प्रतिशत
हरियाणा	5.6 प्रतिशत

उत्पादन बढ़ाने के लिए 2 बड़े प्रयास

किसान के स्तर पर : किसानों ने ज्यादा दूध देने वाली नस्लों के पशुओं को प्राथमिकता दी। ज्यादा दूध उत्पादन से आमदनी बढ़ी। प्रदेश में करीब 36 लाख दुधारू पशु है। 60.85 लाख भैंस व 19.08 लाख गाय है।

सरकार के स्तर पर : पशुपालन विभाग के पूर्व डी.जी. जी. एस जाखड़ के अनुसार सरकार ज्यादा मात्रा में दूध देने वाली नस्ल के पशुओं के सीमन उपलब्ध करा रही है। देसी गाय की डेयरियों के लिए 50 प्रतिशत सब्सिडी दी जा रही है।

भविष्य की योजना

सिर्फ बछड़ियां पैदा करने वाला सीमन ऐसा सीमन लाया गया है, जिससे सिर्फ बछड़ियां पैदा होगी। इनमें रोज 56 कि.ग्रा. दूध देने वाली एच.एफ. नस्ल, 21.3 कि.ग्रा. दूध वाली गीर नस्ल और 22 कि.ग्राम. दूध देने वाली साहीवाल नस्ल की गाय तैयार होगी। यह सीमन 500 रू में उपलब्ध कराया जाएगा। इसके लिए पशुपालन विभाग में आवेदन करना होगा। करीब 10 लाख पशुओं का बीमा किया जाएगा।

दूध उत्पादन में भारत नंबर–1

दूध उत्पादन में भारत करीब 1760 लाख टन के साथ विश्व में नंबर–1 हैं, इसमें 774.10 लाख टन गाय, 807.80 लाख टन भैंस, 56.20 लाख टन बकरी के दूध का योगदान है। विश्व के कुल दूध उत्पादन में भारत का हिस्सा करीब 20 प्रतिशत है। भारत के बाद अमेरिका का दूसरा स्थान है।

पशुओं को गर्भित कब करायें: गर्भाधान का उचित समय

ऋचा खीरबाट एवं रचना

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक है कि पशुओं की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जाये। प्रतिवर्ष बच्चे का उत्पादन पशु जनन–उत्पादन क्षमता का द्योतक व किसानों के आय का स्त्रोत होता है। लेकिन इन पशुओं का गलत समय पर गर्भित (हरी) कराना ही उनके बांझपन का कारण हो जाता है। हालांकि उनके बांझपन के बहुत से कारण होते हैं परन्तु उचित समय पर अपनी गायों को गर्भित करवा करके हम इनके बांझपन को काफी हद तक रोक सकते हैं।

बछिया

"भारतवर्ष में हो रहे श्वेत क्रान्ति" में संकर प्रजनन एक क्रान्तिकारी कदम हो गया है। अतः संकर नस्ल की बछिया में जल्दी ही गर्भ होने के लक्षण दिखने लगते है। हालांकि अपनी देसी नस्ल की बछियों में यह लक्षण देरी से दिखते है। पशुओं में गर्भ होने से पहले जो लक्षण होते हैं उनको हम पशुओं की अल्प व्यस्कता की उम्र प्यूबरटी कहते हैं। इस अवस्था में इन्हें गर्भित नहीं कराया जा सकता क्योंकि इस स्थिति में पशुओं में जनन–अंग पूर्ण विकसित नहीं होते। पशुओं का जननांग पूर्ण रूप से उनकी पूर्ण व्यस्क अवस्था (मेचुरिटी) पर ही विकसित होते है। यह अवस्था उनकी नस्ल उम्र व शारीरिक वृद्धि पर निर्भर करती है।

पशुओं का शारीरिक विकास उनके स्वास्थ्य एवं आहार पर निर्भर करता है। अतः हमें चाहिये कि हम अपने पशुओं में शुरू से ही उनके उचित आहार, टीका व चिकित्सा आदि पर ध्यान दें। शुरू में उन पर अगर हम ध्यान नहीं देते तो उनका शारीरिक विकास एवं जनन–अंगों का विकास ठीक से नहीं होता। जिसका कुप्रभाव उनको बांझ तक बना देती है।

हमें इसका भी ध्यान रखना चाहिए कि पशु उचित उम्र तक अवश्य गर्भित हो जावे। अन्यथा उम्र गुजर जाने के बाद अगर हम इसे गर्भित कराते हैं तो हो सकता है कि इनके डिम्बकोश में खराबी (सीसटिक ओबरी) आ जाये जिससे उनमें बांझपन आ जाने का डर रहता है।

गाय

अच्छे पशुओं में ऋतुमति का पहला लक्षण उनके प्रसव के कुछ दिनों के बाद आ जाता है। लेकिन जिन पशुओं में प्रसवकाल के समय कोई गड़बड़ी जैसे बच्चा उलझना, जेर का देर में निकलना हो या प्रसव काल के बाद उनके आहार पर ध्यान नहीं देने से उनकी ऋतुमति लक्षण में देरी हो जाती है।

पशुपालकों को चाहिए कि अपने पशुओं को प्रसव के 45 दिन से 75 दिन के बीच अवश्य गर्भित करा लें। क्योंकि यह अनुभव किया गया है कि प्रसव के 45 दिन से पहले गर्भित कराने से अधिकतर पशु गर्भित नहीं हो पाते और गर्भित हो भी जायें तो बच्चे गिर जाने का भय बना रहता है दूसरी तरफ बच्चों में उनके 75 दिन बाद ऋतुमति के लक्षण खत्म होने लगते है अगर पशुओं के प्रसव के समय या बाद में कोई गड़बड़ी ही तो कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र से तकनीकी सहायता प्राप्त करें।

ऋतुमति के लक्षण

पशुओं के उनके ऋतुमति लक्षण के आधार पर तीन भागों में बांटा जा सकता है–

1. कड़ी गर्मी वाले पशु जिसमें ऋतुमति के लक्षण बहुत ही स्पष्ट होते हैं।
2. बीच की गर्मी वाले पशु जिसमें ऋतुमति के लक्षण साधारण किस्म के होते हैं।
3. चुपी गर्मी वाले पशु जिसमें ऋतुमति के लक्षण स्पष्ट न होते हैं।

भारतीय भौगोलिक कृषि व जलवायु स्थिति में अधिकतम पशु चुपी किस्म के होते है। अतः किसान भाइयों को चाहिये कि वे अपने पशुओं को निम्नलिखित ऋतुमति के लक्षणों को

जानें। जब पशु ऋतुमति अवस्था में होता है तो उसके सम्पूर्ण शरीर में एक विशेष परिवर्तन आ जाता है ऐसी हालत में पशु रेंकना, चिल्लाना, दौड़ना व भागने की कोशिश करना इत्यादि का लक्षण प्रकट करता है। उसकी आँखों में एक विशेष चमक आ जाती है और ऐसा लगता है जैसे उसको किसी की तलाश हो उसके कान खड़े व हमेशा चौकन्नी होती है। उसको अपने खाना खाने व दूसरे काम में अपेक्षाकृत कम दिलचस्पी होती है यहां तक की दूध देने वाले पशुओं का दुग्ध उत्पादन बहुत कम हो जाता है। जब पशु अधिक संख्या में होते है तो ऋतुमति पशु अपने आप को दूसरे पशु समूह से अलग रहने की कोशिश करती है और दूसरे पर कूदती है। जब ऋतुमति पशु को अपने ऊपर कूदने पर हटाता नहीं बल्कि दूसरे पशु को अपने ऊपर कूदने देता है तो पशुओं के ऋतुमति की इस अवस्था को स्थिर–ऋतुमति स्टैडिंग हीट कहते है यह लक्षण ऋतुमति के लिए बहुत ही अच्छा होता है ऋतुमति पशु को बाहरी योनि में एक विशेष चिकनाहट फूला–फुलाब लसीलापन आ जाता है और इससे योनि में एक साफ शीशा जैसा पारदर्शक स्त्राव गिरता है जिसे हम योनि द्रव कहते है। पशुओं के विशेष कर बैठने पर यह द्रव साफ दिखाई पड़ता है। वैसे तो सालभर पशु ऋतुमति होती है लेकिन हम पशुओं के ऋतुमति होने पर मौसम का प्रभाव भी होता है। देशी नस्ल के पशु बसन्त व हल्की गर्मी ऋतु से अपेक्षाकृत जाड़े से बसन्त ऋतु में अधिक पाया जाता है।

एक ही ऋतुमति में दो बार हरी (गर्भित) करायें

पशुओं में ऋतुमति का एक चक्र होता है जिसे ऋतुमति कहते है। यह चक्र लगभग 21 दिनों का होता है। लेकिन यह अनुभव किया गया है कि भारतीय जलवायु में संकर विशेषकर होंल्सटीन फ्रिजियन शंकर में कभी–कभी 48 घंटे तक ऋतुमति होती है और मादा पशु का डिम्ब ऋतुमति के खत्म होने के करीब 12 घंटे के बाद डिम्बकोश से विवेचन के लिए निकलता है परन्तु नर–पशु के वीर्य का शुक्राणु मादा की बच्चेदानी में सिर्फ 24 घंटे तक ही जिन्दा रहता है। अतः अच्छे होल्सटीन–फ्रिजियन संकर को ऋतुमति में 24 घंटे के अन्तर से दो बार हरी (गर्भित) करने के लिये अपने पास के किसी भी कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र पर लायें। जब आपके पशु शाम या रात को गर्म हो तो आप उन्हें दूसरी दिन सुबह हरी (गर्भित) करायें। इससे उनमें गर्भ ठहरने का अवसर अधिक मिलता है। सुबह ऋतुमति हो तो पशु को उसी दिन गर्भित करायें।

गर्भाधान का उचित समय

मादा पशु को गर्मी के लक्षण होने के लगभग 12 घंटे बाद कृत्रिम गर्भाधान करवाना उचित होता है। यदि पशु में गर्मी के लक्षण सुबह दिखाई दें तो शाम को कृत्रिम गर्भाधान करवाया जाये। यदि शाम को गर्मी के लक्षण दिखाई दें तो सुबह कृत्रिम गर्भाधान करवाना उचित होता है। कुछ पशुओं में 3–4 दिनों तक गर्मी के लक्षण दिखाई देते हैं, ऐसे पशुओं को लगातार 2–3 दिनों तक कृत्रिम गर्भाधान करवायें। ग्रीष्म काल में भैंसे गर्मी में कम आती हैं इसलिए भैसों के ब्यांत का मौसम भी गर्मियों के बाद शुरू होता है। जो पशु गर्मियों में ब्याते हैं उनका भी दुग्ध उत्पादन गर्मी के कारण कम हो जाता है। इस समस्या के समाधान के लिए पशुओं को गर्मी में लाने के लिए विशेष उपचार किया जाता है और कृत्रिम गर्भाधान द्वारा गर्भित करवाया जाता है। इस प्रकार के विशेष उपचार द्वारा पशुओं को समयानुसार गर्भित करवाकर गर्मी के दिनों में दूग्ध उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। जिससे पशुपालकों को काफी लाभ हो सकता है।

दूध-एक सम्पूर्ण आहार

सुरेन्द्र कुमार, रीतू रानी एवं संजय यादव
पशुजन्य उत्पाद प्रद्यौगिकी विभाग, पशु चिकित्सा महाविद्यालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

दूध हमारे खाने का एक बहुत आवश्यक भाग है। गाय, बकरी, भैंस, स्त्री, हस्तिनी, घोड़ी, ऊँटनी और भेड़ का दूध उपयोगी माना जाता है। राष्ट्रीय सेंपल सर्वे के ताजा आंकड़ों के मुताबिक दूध और इसके उत्पादों की खपत पर खर्च पिछले पांच साल में शहरों में 39 फीसदी और गावों में 42 फीसदी बढ़ा है। इन पांच साल में दूध का उत्पादन 15.2 फीसदी बढ़ा। फिर भी कीमतें दोगुना बढ़ी हैं। आपूर्ति बढ़ने के बावजूद तेजी से बढ़ी मांग और खपत साबित करती है कि दूध की अहमियत अब रोजमर्रा के खान–पान में सबसे ज्यादा है। साथ ही पोषण के आधुनिक विज्ञान और नई रिसर्च में दूध को सेहत के लिए महत्वपूर्ण माना गया है।

दूध का पालन–पोषण में बहुत महत्व है। छोटे बच्चे को दूध प्रतिदिन देना चाहिए क्योंकि स्वास्थ्य के लिए हितकर तो है ही साथ ही हड्डियों को भी मजबूत बनाता है। यह शरीर के कीटाणुओं से लड़ने की क्षमता देता है, मुख को कान्तिमय बनाता है। दूध से दही, आइसक्रीम, मेंगो षेक, कुल्फी, गाजर का हलुआ आदि बनाया जाता है। दूध को सदैव गर्म करके पीना चाहिए, इससे दूध के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। माँ का दूध छोटे बच्चों की आँखों के लिए हितकर होता है। रात को सोने से पूर्व हमेशा दूध पीने से कब्ज की शिकायत नहीं रहती। कच्चे दूध और दही से बालों को धोने पर बालों की जड़े मजबूत होती है। बाल लम्बे तथा चमकदार होते हैं और सिर में खुश्की भी नहीं रहती। दूध पाउडर के रूप में भी उपलब्ध होता है जिससे वह अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। यह पेय पदार्थ सस्ता है, जिसे सभी व्यक्ति दूध खरीद सकते हैं। गरीब व्यक्ति काजू, बादाम, किशमिश जैसे महंगे पदार्थ नहीं खरीद सकता लेकिन दूध अवश्य खरीद सकता है, जो उसके शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करता है। अतः अपनी आर्थिक क्षमता के अनुसार अपने भोजन में दूध की व्यवस्था करनी चाहिए। यह मानव का पहला आहार होता है। लेकिन, जैसे–जैसे

हमारी उम्र बढ़ती जाती हैं, हम इसके सेवन में कमी करने लगते हैं। कुछ लोग इसलिए दूध नहीं पीते क्योंकि उन्हें डर होता है कि इससे उनके आहार में वसा की मात्रा अधिक हो जाएगी। कुछ लोग इसलिए इसका सेवन नहीं करते, क्योंकि उन्हें लगता है कि अब इन्हें इसकी जरूरत नहीं है। लेकिन, दूध में विटामिन और अन्य पोषक तत्वों की प्रचुर मात्रा होती है और साथ ही यह स्वास्थ्य के लिए भी फायदेमंद होता है।

दूध पीने के लाभ

1. **चमकदार त्वचा :** दूध में ऐसे कई पोषक तत्व मौजूद होते हैं, जो त्वचा के लिए फायदेमंद होते हैं। दूध में मौजूद लेक्टिक एसिड त्वचा को नरम बनाने का काम करता है। इसके साथ ही इसमें मौजूद एमीनो एसिड त्वचा को मुलायम करने में भी मदद करता है। दूध में मौजूद एंटी–ऑक्सीडेंट्स त्वचा को कुदरती दुष्प्रभाव से बचाने में मदद करते हैं।
2. **हड्डियों व दांतों की मजबूती :** दूध में भरपूर मात्रा में कैल्शियम होता है, जो हमारी हड्डियों की मजबूती के लिए बेहद आवश्यक होता है। सिर्फ बढ़ते बच्चों के लिए ही कैल्शियम जरूरी नहीं होता, बल्कि

वयस्कों को भी अपनी हड्डियां मजबूत बनाये रखने के लिए कैल्शियम की जरूरत होती है। इससे वे ऑस्टियोपोरोसिस जैसी बिमारियों से बचे रहते हैं। दूध दांतों के लिए भी फायदेमंद होता है। यह दांतों की सड़न और कैविटी से बचाये रखने में हमारी मदद करता है। कैल्शियम शरीर में अच्छी तरह अवशोषित हो सके इसके लिए विटामिन डी की जरूरत होती है, जोकि दूध में मौजूद होता है।

3. **मांसपेशियों की मजबूती** : दूध में मौजूद प्रोटीन मांसपेशियों के पुनर्निर्माण में मदद करता है। व्यायाम के बाद एक गिलास दूध पीने से शरीर को रिकवर होने के लिए पर्याप्त ऊर्जा मिलती है। इससे मांसपेशियों की सूजन दूर होती है और साथ ही व्यायाम के दौरान शरीर से जो पानी की कमी हो जाती है उसे भी दूर किया जा सकता है।

4. **वजन कम करने से तनाव घटाने में सहायक** : जो महिलायें कम वसायुक्त दूध पीती हैं वे उन महिलाओं की अपेक्षा अधिक वजन कम करती हैं, जो अन्य स्त्रोतों से घटाती हैं। यह भूख शांत करने का बहुत बढ़िया स्त्रोत है। फल खाते समय या फिर डिनर में दूध का सेवन किया जा सकता है। दूध दिन भर के तनाव को दूर करने का बेहतरीन जरिया है। गर्म दूध तनाव को दूर कर मांसपेशियों को राहत देता है। यह तनाव को मिटाकर ऊर्जा बढ़ाने में मददगार होता है।

5. **शरीर को स्वस्थ रखने में मददगारः** दूध में उच्च रक्तचाप और स्ट्रोक के खतरे को कम करने के भी गुण होते हैं। यह लिवर को कोलेस्ट्रॉल का निर्माण करने व पेट में अम्ल बनने से भी रोकता है। दूध में मौजूद विटामिन ए और बी आंखों की रोशनी के लिए भी फायदेमंद होता हैं व कैंसर के खतरे को कम करने में भी मदद करता है।

दूध के बारे में मिथक व सच्चाई

मिथक : दूध में पानी मिलाने से उसमें से वसा तत्व कम हो जाता है।

सच्चाई : दूध में पानी मिलाने से उसमें मौजूद सभी पोषक पदार्थों की सांद्रता कम हो जाती है। दूसरे शब्दों में कहें तो सभी पोषक पदार्थों घनत्व कम हो जाता है।

मिथक : दूध में से वसा बाहर निकाल लेने से उसका पोषण खत्म हो जाता है।

सच्चाई : ऐसे दूध को कम कैलोरी के साथ पोषक तत्व मिलने का बेहतर स्त्रोत माना जाता है।

मिथक : पाश्च्युराइज्ड दूध की बजाय कच्चे दूध में ज्यादा पोषक तत्व होते हैं।

सच्चाई : पाश्च्युराइज्ड और कच्चे दूध में पोषक पदार्थों का स्तर समान होता है। पाश्च्युरीकरण की प्रक्रिया में दूध को कम समय के लिए उच्च तापमान (70 डिग्री सेल्सियस) पर गर्म किया जाता है। जिससे दूध में मौजूद जीवाणु मर जाते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो पाश्च्युराइज्ड दूध से किसी भी तरह के संक्रमण का खतरा नहीं होता।

मिथक : दूध की जरूरत केवल बच्चों को होती है, बड़ों को नहीं।

सच्चाई : शरीर में कैल्शियम की पूर्ति करने के लिए हर उम्र वर्ग को दूध की जरूरत होती है। साथ ही दूध हड्डियों में क्षरण (आस्टियोपोरोसिस और आस्टियोपोरोटिक फ्रेक्चर) को रोकने में मददगार होता है।

मिथक : यदि आपको लेक्टोस (दुग्ध शर्करा) पसंद नहीं है तो दूध से दूर रहना ही बेहतर।

सच्चाई : यह जरूरी नहीं कि आपको दूध पसंद हो लेकिन आप अन्य दुग्ध उत्पाद जैसे पनीर, बटरमिल्क, दही या चीज का सेवन आसानी से कर सकते हैं।

मिथक : दूध एक संपूर्ण भोजन हैं।

सच्चाई : दूध में लोहा, विटामिन सी, डी, ई और के नहीं पाए जाते। अतः स्वस्थ शरीर के लिए सिर्फ दूध पर ही निर्भर नहीं रहा जा सकता।

मिथक : जब कैल्शियम की प्रचुरता वाले और भी उत्पाद हैं तो दुग्ध उत्पादों की कोई जरूरत नहीं।

सच्चाई : दूध प्राकृतिक रूप से मिलने वाले कैल्शियम का प्रमुख स्त्रोत है। इसके अलावा दूध में प्रोटीन, मैग्नीशियम, फास्फोरस, जिंक और विटामिन बी जैसे कई पोषक उत्पाद पाए जाते हैं। विटामिन बी हड्डियों के निर्माण में मददगार होता है। इसके अलावा अनाज, मूंगफली, और पत्तेदार सब्जियों से मिलने वाला कैल्शियम पूर्ण रूप से अवशोषित नहीं होता।

दुधारू पशुओं हेतु पशुपालन विभाग, हरियाणा की विभिन्न योजनाएँ

गरिमा चौधरी[1], अमित सांगवान[2] एवं देवेन्द्र सिंह[2]

[1]पशु चिकित्सक, पशुपालन विभाग, हरियाणा, [2]हरियाणा पशुविज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़

दुग्ध उत्पादन व्यवसाय छोटे एवं बड़े दोनों स्तर पर सबसे ज्यादा विस्तार में फैला हुआ व्यवसाय है। छोटे स्तर पर दूध देने वाले पशुओं को बढ़ावा देने की भारत में सामान्य प्रथा है परन्तु आधुनिक किसान डेयरी को व्यवसाय के रूप में अपना रहा है क्योंकि यह बेरोजगार शिक्षित और अनपढ़ युवाओं के लिए व्यापार करने का महाने अवसर लाता है। डेयरी को व्यवसाय के रूप में अपनाने के इच्छुक व्यक्ति डेयरी व्यवसाय के लिए सरकारी योजनाओं का लाभ भी ले सकते हैं। वर्तमान में हरियाणा सरकार पशुपालन विभाग द्वारा दुधारू पशुओं हेतु निम्नलिखित योजनाएँ चलाई जा रही हैं–

1. **मुर्राह भैंस संरक्षण कार्यक्रम** : इस योजना के तहत भैंसों में सबसे उत्तम नस्ल मुर्राह भैंस पालने की प्रवृति की बढ़ावा देने हेतु दुग्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है एवं पशुपालकों को प्रोत्साहन राशि दी जाती है। इस योजना के तहत दी जाने वाली प्रोत्साहन राशि निम्न प्रकार हैं–

प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन	प्रोत्साहन राशि
18–22 कि.ग्रा.	15000
22–25 कि.ग्रा.	20,000
25 कि.ग्रा. से अधिक	30,000

2. **गौ संवर्धन एवं संरक्षण कार्यक्रम** : हरियाणा में गाय की देशी नस्ल (हरियाना, साहीवाल एवं बेलाही) को बढ़ावा देने हेतु दुग्ध नापने के कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है एवं पशुपालकों को प्रोत्साहन राशि दी जाती है। इस योजना के तहत दी जाने वाली राशि निम्न प्रकार है–

गाय की नस्ल	प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन	प्रोत्साहन राशि
हरियाना	8–10 कि.ग्रा. 10–12 कि.ग्रा. 12 कि.ग्रा. से अधिक	10,000 15000 20,000
साहीवाल	10–12 कि.ग्रा. 12–15 कि.ग्रा. 15 कि.ग्रा. से अधिक	10,000 15000 20,000
बेलाही	5–8 कि.ग्रा. 8–10 कि.ग्रा. 10 कि.ग्रा. से अधिक	5000 10,000 15000

3. **पशु हाईटेक और मिनी डेयरी स्थापना योजना** : पशुपालन को बढ़ावा देने के लिए हाईटेक डेयरी योजना की शुरूआत की गई है। इसके तहत डेयरी स्थापना के लिए बैंक द्वारा बिना ब्याज लोन दिया जाता है। लोन का ब्याज राज्य सरकार भरती है। इसके तहत 3 से 50 गाय या भैंसों की डेयरी स्थापित की जा सकती है। 3–20 पशुओं की यूनिट की पूरी लागत की 15 फीसदी एवं 21–50 पशुओं की यूनिट की लागत की 25 फीसदी राशि लाभार्थी को स्वयं लगानी होगी एवं शेष धनराशि बैंक ऋण के रूप में प्राप्त की जा सकेगी।

मिनी डेयरी में पशुओं की लागत निम्न प्रकार होगी–

पशु का प्रकार	दुग्ध उत्पादन	अधिकतम मूल्य
क्रॉसब्रेड गाय (H.F.)	8–12 लीटर 13–15 लीटर 16–20 लीटर 20 लीटर से अधिक	60,000 65,000 72,000 83000
भैंस	8–12 लीटर 13–15 लीटर 15 लीटर से अधिक	66,000 77,000 88,000
साहीवाल गाय	8–12 लीटर 13–15 लीटर 15 लीटर से अधिक	60,000 72,000 83,000
हरियाना गाय	8–10 लीटर 10–12 लीटर 12 लीटर से अधिक	38,000 44,000 55,000
बेलाही गाय	8–10 लीटर 10–12 लीटर 12 लीटर से अधिक	38,000 44,000 55,000

अनुसूचित जाति द्वारा 2 या 3 दुधारू पशुओं की डेयरी स्थापना हेतु 50 प्रतिशत सब्सिडी सरकार द्वारा दी जाती है।

पशुओं में जुगाली और लार का महत्व

ज्योत्सना मदान एवं शालिनी शर्मा
पशु चिकित्सा फिजियोलॉजी एवं बायोकेमिस्ट्री विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान कॉलेज,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

एक जुगाली करने वाले पशु अपने मुंह मौखिक गुहा और जीभ का उपयोग चराई के दौरान चारा काटने के लिए या कटे हुए फीडस्टफ्स का उपभोग करने के लिए करता है। जुगाली करने वाले पशुओं के भोजन को पचाने के लिए एक चार कक्षीय पेट होता है और इसलिए वे अपनी कुई को चबा सकते हैं। गाय और भैंस में खाने के बाद जुगाली और पचाने के तरीके बाकी पशुओं से अलग है। चारा थोड़ी देर चबाने के बाद उसमें लार के साथ सोडियम, पोटेशियम, फॉस्फेट, बाइकार्बोनेट और यूरिया मिश्रित होता है और बोलस बना कर उसे निगला जाता है। जब पशु जुगाली करता है तो भोजन वापिस मुंह में आता है और फिर उसे चबाया जाता है।

लार मिश्रण होकर बोलस बन कर निगला जाता है। एक गाय एक दिन में 40 से 150 लीटर लार बनाती है। यह भी पशु के चारे पर निर्भर करता है। चारे से लार ज्यादा बनता है जबकि दाना खिलाने से लार कम बनता है। धीरे–धीरे चूसकर पैदा की गई लार दूध को दही बनाने में मदद करने के लिए एबॉसम में पीएच को संतुलित करती है। लार में आवश्यक एंजाइम होते हैं जैसे लाइपेज जो की वसा पाचन के लिए आवश्यक है और एक महत्वपूर्ण ऊर्जा स्त्रोत है।

लार रूमेण सूक्ष्मजीवों के लिए पोषक तत्वों का स्त्रोत है जैसे म्यूकोप्रोटीन, इलेक्ट्रोलाइट्स और यूरिया विशेष रूप से सोडियम रूमेण बैक्टीरिया के लिए विकास कारक के रूप में कार्य करता है।

अधिकांश जानवरों में लार ग्रंथियों के तीन प्रमुख जोड़े होते हैं जो उनके द्वारा उत्पादित स्त्राव के प्रकार में भिन्न होते हैं–

1. पैरोटिड ग्रंथियां एक सीरस पानी स्त्राव पैदा करती हैं।

2. सबमैक्सिलरी अनिवार्य ग्रंथियाँ एक मिश्रित सीरस और श्लेष्म स्त्राव का उत्पादन करती हैं।
3. सब्बलिंगुअल ग्लैंड्स एक लार का स्त्राव करती है जो मुख्य रूप से श्लेष्मल होती है। घोड़े का प्रतिदिन 40 लीटर तक का लार उत्पादन होता है। सुअर 15 लीटर तक लार उत्पादन करते हैं।

लार कई तरह से काम करता है–

1. रूमेण में किण्वन के लिए तरल पदार्थ का प्रावधान करता है।
2. रूमेण में एसिड की बड़ी मात्रा को कम करता है जो की रूमेण पीएच के रखरखाव के लिए महत्वपूर्ण है जो अफारे के जोखिम को कम कर सकता है।
3. लार में प्राकृतिक एंटीबायोटिक गुण होते हैं जो कि संक्रमण के लिए एक बछड़े के लिए सबसे पहला और मुख्य रक्षा का स्त्रोत है।
4. लार में आवश्यक एंजाइम होते हैं, जैसे लाइपेज, वसा पाचन के लिए आवश्यक एक महत्वपूर्ण ऊर्जा स्त्रोत है।

लार में कैल्शियम और फॉस्फेट की उच्च सांद्रता

होती है जो दांतों के खनिज में मदद करता है। प्राकृतिक अवस्था में एक बछड़ा गाय का दूध पीता है। यह धीरे–धीरे अपनी गर्दन को फैलाकर पीता है और बछड़ा बहुत अधिक लार का उत्पादन करता है। जब एक बछड़े को तेजी से खिलाया जाता है तो वह दूध को पचाने के लिए आवश्यक लार का उत्पादन नहीं कर सकता है। यह बछड़े को कान, नाभि और थन के साथ–साथ घेरने और चूसने के दौरान पैदा होने वाली लार बनाने की कोशिश कर सकता है। क्रॉस चूसना एक वास्तविक समस्या हो सकती है और इससे नाभि के संक्रमण कान के संक्रमण और विकासशील स्तन ग्रंथियों को नुकसान पहुंच सकता है। क्रॉस चूसने के एक सप्ताह के भीतर पोषण संबंधी दस्त की संभावना बढ़ जाती है। जल्दी रूमेण विकास कम दस्त स्वस्थ बछड़े की बेहतर औसत दैनिक वजन वृद्धि होती है।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं. पशु विज्ञान केन्द्र

1. पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल, बाई पास चौक, कैथल
2. पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत
3. पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद
4. पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा
5. पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी
6. पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक
7. विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार
8. पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला
9. पशु विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
10. पशु विज्ञान केन्द्र, करनाल
11. पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी
12. पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
व्यावसायिक डेयरी फार्मिंग
प्रशिक्षण

DAIRY FARMING
TRAINING

पशु विज्ञान केन्द्र, रेवाड़ी
डेयरी फार्मिंग व्यावसायिक प्रशिक्षण

डा. यादव ने पशुपालन व पशुपालकों की आमदनी बढ़ाने के बताए तरीके

पशु विज्ञान केंद में हुआ डेयरी प्रशिक्षण कार्यक्रम

पशु टीकाकरण जागरूकता अभियान बाछोद से शुरु

ग्रामीणों को टीकाकरण के बारे में जानकारी देते डॉ. देवेंद्र।

175 पशुओं का हुआ निःशुल्क इलाज

'पशुपालन को आमदनी बढ़ाने के लिए व्यवसाय की तर्ज पर अपनाएं'

कृषि वैज्ञानिक पशुपालकों को देंगे आमदनी को दोगुना करने व आधुनिक तरीके से पशुपालन करने का प्रशिक्षण

पशुपालकों को वैज्ञानिक ढंग से पशुपालन की शपथ दिलाई

पशुओं में पनप रहा थनैला रोग, जल्द दूध का परीक्षण करा इलाज कराएं

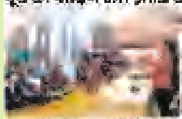

दुग्ध उत्पादन व आमदनी बढ़ाने के लिए टिप्स

पशुपालन प्रशिक्षण में 47 युवाओं ने लिया भाग

पशु अस्पताल में एंटी रैबीज टीकाकरण शिविर

गांव रिवासा में लगाया जा रहा शिविर

पशुपालकों को दूध व्यापार की दी जाएगी जानकारी

पशुओं की नस्ल की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए अपनाएं कृत्रिम गर्भाधारण पद्धति

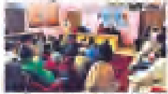

पशुपालकों को बताए उत्तम नस्ल, संतुलित आहार व वैज्ञानिक देखभाल करने के तरीके

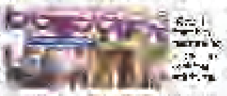

पशुओं के रख रखाव के बारे में विशेषज्ञों ने दिए टिप्स

7 दिवसीय पशुपालन प्रशिक्षण शिविर में दी जानकारी

आधे से कम दाम पर मिलेगा पशुओं के लिए खनिज मिश्रण

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार – 125004 (हरियाणा)